उस गन्दी जगह से भी दस पांच अपने मतलब के लोगों को छांटा और दो या तीन पर उन्हीं को लदवा के ले गया ; पर इन कमबख़्तों से भी मेरा काम पूरा न हुआ–अन्त को अपना चश्मा दुरुस्त कर मैं ख़ुद जो उसे पलरे पर जा बैठा तो वह नर्क वाला बांट दो या तीन फीट ऊंचा हो गया–तब मैं बड़ा प्रसन्न हुआ परन्तु मन में समझ गया कि मुझ सा पापी शायदही कोई होगा–फिर दोनों पलरों को खाली कर और थोड़े से बटखरे बचे थे उन्हें तौलने लगा–एक बांट पर एक तरफ "यहां का सुख वहां का दुख" दूसरी ओर "यहां का दुख वहां का सुख" और यह बचन गोलाकार में लिखा था–मैंने उन्हें गौर से पढ़ कर सोचा तो मेरे मन में आया कि किसी शायर का यह कहना बहुतही सटीक है "मरमिटे जो ज़िन्दगी में वे फिर कभी मरते नहीं" इस बांट पर भी और बहुत से ऐसे भारी २ बाट चढ़ाये जो मुझ से उठ भी नहीं सकते थे ; जैसा आरोग्यता भाग्य इत्यादि–इधर उधर खोजने पर थोड़े से बटखरे और पड़े रह गये थे जिन्हें मैंने अभी तौला ही न था ; उन पर एक में सनातन धर्म लिखा था पर यह बांट बिलकुल जीर्ण और घिसा हुआ था–इतने पर भी बहुत से नये २ बांट जिन पर हाल के चलाये गये पंथ और समाजों के नाम लिखे थे पर उन नये मज़हबों की भाषा न जानने के कारण उन का नाम मुझ से ठीक २ न पढ़ा गया उन सबों को भी मैंने तौला पर कोई पूरे न उतरे :–

स्वप्न में ऊट पटाँग बातें सूझतीही है मैंने कई एक हिन्दी पत्रों और अख़बारों को आपस में तौला तो कोई बढ़ गया और कोई ज़रा सा घट गया; पर हिन्दीप्रदीप पत्र को जो तौला तो सब के सब रद्दी की तरह तुलते चले गये और जिस पलरे पर यह रक्खा था उसे जुंबिश तक न दे सके–तब मैंने एक अंगरेज़ी बटखरा जिसपर Irregularity अनियत समय लिखा था उठाया जो दूसरे पलरे पर रक्खा तो हिन्दी-प्रदीप साहब तुरन्त टंग गये–मुझे इस पर बड़ी हंसी आई और कुछ बूंदें जो मुझ पर पड़ीं तो चौंक कर उठ बैठा और देखा तो मेरे घर के लोग पास खड़े कह रहे हैं "इतनी देर घूमने में क्यों लगा देता है?

चल घर भी चलेगा या यहीं पड़ा २ भीगैगा क्या? यह कह मुझे डाटने लगे तब मैंने इस किस्से को जो अभी स्वप्न में अनुभव किया था सुनाय उन का क्रोध शान्त किया और घर की राह ली—

ब्र. मो. कूल. प्रयाग

Nose *versus* Ear.

मुकद्दमा

नाक आंख में झगड़ा हुआ। कि दोनों में किसका यह चश्मा हुआ॥
ये है निस्ल दीवार दर दोमकां। जो बुनियाद झगड़े की है इस जहां॥
किया नाक ने जा "ज़वां" को वकील। औ समझा दिया मामिलाये अपील॥
समझ बूझ कर, खूब तइयार हो। पहिन सुर्ख़ चोगा गई, कोर्ट को॥
मुक़द्मा था दरपेश ह्वां पर ज़ुरूर। औ कुर्सी पर बैठे थे जसटिस हुज़ूर॥
था नाम आप का "आनरेबुल इअर"। बड़े ज़ोर से आप बोले हिअर॥
ये कहतेही ख़ामोश अमले हुये। वकील आगये बहस करते हुये॥

बहस

हुज़ूर! आप को हूं मैं देता बता। जो इस मामले का है पूरा पता॥
यह चश्मा है क़ब्ज़े में इस नाक के। ज़माना हुआ सैकड़ों बर्ष के॥
सुबूत इसका ये है, कि ये देखिये। बनी सीट है नाकही के लिये॥
ये बाँसे पै करती हमेशा है बास। औ रखती है कब्ज़ः में "आई का ग्लास"॥
हुज़ूर! आप फिर ग़ौर फ़रमाइये। गर नाकों को चेहरे से हटवाइये॥
"बहुतसे हैं जिनको है चश्मे से प्रेम। जो रखना सके नाक़ पर कोई "फ्रेम"॥
तो कहिये कि है कौन सा क़ाइदा। जो आखों को चश्मे से हो फ़ाइदा॥
बस, होता है अन्त मेरी बहस का। हो चश्मे पै क़ब्ज़ा अभी नाक का॥

गवाही

गवाहों की तलबी हुई आंख के। "पलक" और "भौं" पहुंची ह्वां डांटके॥
किया दोनों ने ख़ूब झुक कर सलाम। बयां कर चलीं मामला ये तमाम॥

"पंलक" ने कहा खाके गंगा कसम । क़रीब आगई उम्र मेरी ख़तम ॥
मैं रखती सदा साफहूं ग्लास को । न हो जिस्में तकलीफ़ इस आंख को ॥
पहुंचते हैं आराम जो आँख को । नहीं पहुंच सक्ते हैं वे नाक़ को ॥
पड़ा नाम है इसका "चश्मा" ये क्यों ? लगी पूछने ख़ूब फुरती से "भौं" ॥
महज़ मानी करते हैं ज़ाहिर ज़ुरूर । कि चश्मों का चश्माही है एक नूर ॥
ये सुन कर हुये बहुत जसटिस भी दंग । ओ समझे की "भौं" है बहुत अक़्मंद

इनसाफ

तो "जसटिस इअर" ने किया फैसला । "है चश्मे पै दोनों को कब्ज़ः मिला ॥
मगर दिन को, या रोशनी जब कि हो । तो नाक्ही फ़क़त क़ाबिज़ इसपेहो ॥
रखें आंख अपने तईं परदः में । करे इस्तेमाल इसको वे रात में ॥
लगे सुनतेही हंसने सब ज़ोर से । ओ भागे कचहरी के सब शोर से ॥
कहा सबने जसटिस हैं अहमक़ व फूल । ये सुन कर चले घरको बी. एम. कूल ॥

डंसबोध-खंड काव्य । पठ्य पाठ्य, श्रव्य श्राव्य ।

महा कवि श्री मंड्सधिराज विरचित ।

हे डंस-बंश-अवतंस, महा-प्रशंस !
हे बुद्धि-भ्रंश, निज-मानस-मत्त-हंस ॥ १ ॥
हे दान-पुष्ट-तन, दानव दुष्ट-दंश ।
हे हे नृ-अंश-धर, हे नर, हे नृशंस ॥ २ ॥

हे मूढ़-चित्त-चिर-तामस-नाशकारी ।
हे गूढ़-तत्व, गुण-गौरव-सत्व-धारी ॥ ३ ॥
हे वेद वेद्य, विदुषाम्बर विज्ञवर्य ।
हे हे गभीर-धिषणा-धर, धीर धुर्य ॥ ४ ॥

हे हे नितान्त-गहनान्तर, शान्त मुद्र।
हे हे सुबोध-बसुधैक-सुधा-समुद्र॥ ५॥
हे सर्ब-लोक-नुत, हे गत-शोक शल्य।
हे हे महा महिम, हेम हिमाद्रितुल्य॥ ६॥

हे नष्ट-दृष्टि, अघनिष्ठ, घनिष्ट छिद्र।
दुर्बोध, दुर्धर, दुराग्रह, दुर्दरिद्र॥ ७॥
हे युक्ति-युक्त-मत-मुक्त, अनुक्त-दोष।
हे सद्विवेक ब्यतिरेक विबृद्ध-रोष॥ ८॥
हे हे विनिर्गल दनर्गल गालि-माल।
हे हे विशाल-गल, हे गरलान्तराल॥ ९॥
हे कोकिला-किल-किला-कल-कंठ-काल।
हे लोल-जिह्व-रद, जर्जर-जल्प जाल॥ १०॥
हे कोकली-विकल-कोकिल, काक-लील।
हे सर्ब-काल-कलहातुर, हे कुशील॥ ११॥
हे कल्मषाक्त, कलि-काल-कला-कलाप।
हे हे विषाद निष बाद, बृथा बिलाप॥ १२॥

हे धृष्ट-नेचर, वनेचर, खेचरोऽसि।
हे हे दिवाचर पिशाच, निशाचरोऽसि।
हे दैत्य-दर्प, बृक-सर्प-सहोदरोऽसि।
हे मक्षिका-क्षिति-पते, मशकेश्वरोऽसि॥ १४॥
हे हृष्ट पुष्ट, नट-नाट्य-सभाचरोऽसि।

क्या करता हम झट खाट के नीचे हो गया वह हमारे मागी का शाब गहना लेगया आर हम को न देखा–

७–एक बार किसी गंवई के एक झक्खड़ पठान के यहां चोरी हो गई–कोई चिराग़ अली नामक थानेदार तहकीकात करने गये उन्हों ने गांव के सब आदमियों को एकत्र कर पठान से पूछा कि इस में चोर कौन है? उस ने उत्तर दिया कि साहब मैं बिना जाने केका कहि देउं–दरोगा ने पुनः डाट के कहा नहीं तुम को बताना होगा–इसके उत्तर में पठान ने कहा साहेब फिर हमहिन आप चोर हन दूसर केका कही–अब थानेदार साहेब बहुत बिगड़े और कहने लगे "अबे शरारत के पुड़िये जानता नहीं मैं चिराग़ अली हूं?" पठान ने कहा साहेब आप खफा न होंय चिराग़ अली ससुर के ऐसी तैसी मैं तो आप का मसाल अली जानत हौं–

८–एक साहब अपने खानसामा पर बिगड़ कर बोले यू सुअर का बच्चा बदमाश–खानसामा ने हाँथ जोड़ कर कहा हूज़ूर मा बाप हैं माफ करैं ताबेदार से भूल हुई–

९–एक लाला साहब जैसे तैसे इन्ट्रेन्स पास हुये अब उन्हें रोटी की फिक्र सताने लगी–बड़ी दौड़ धूप के उपरान्त एक जगह के लिये अर्ज़ी उन की मनज़ूर हुई और हुक्म हुआ कि डाक्टर की हेल्थ सार्टीफिकेट पेश करें–लाला साहब कुछ ऊंचा सुनते थे बड़े घबड़ाये उस दफ़्तर के और२ मुलाज़िम जो इस मुसीबत को भुगत चुके थे उन से पूछा "क्यों भाई वहां क्या करना होता है?" "डाक्टर साहब क्या पूछते हैं और किस तरह इमतिहान करते हैं?" उन लोगों ने कहा "आंखे चीर कर देखते हैं और मुह खुलवा कर जीभ का इमतिहान करते हैं" लाला अक्कमन्द बहुत ज़ियादह थे सब समझ गये–दूसरे दिन डाक्टर साहब के बंगले पर पहुंच खानसामा के हाथ अपना टिकट रवाना किया–भीतर बुलवाये गये–डाक्टर को सलाम कर बैठ गये–डाक्टर ने पूछा How far have you read Mr. ? आपने फौरन अपनी आंखें चीर कर दिखला दी–इसपर डाक्टर बड़ा झल्लाया और बोला

"टुन कां टक पड़ा बोलो" यह सुनतेही आप कुरसी हटाय ज़मीन पर पड़ गये अपना मुह अपने हाथों चीर और आखें फाड़ कर दिखलाने लगे—अब साहब के गुस्से का क्या पूछना था घंटी बजाई और दो चपड़ासियों को बुलाया; लाला को बाहर निकलवा दिया और दफ़्तर में उन की अरज़ी पर He is quite fool and unfit for any Post. लिख कर भिजवा दिया—

१०-एक बाबा जी को संस्कृत और हिन्दी से बड़ा प्रेम था सदा इस यतन में रहा करते थे कि कोई उर्दू लब्ज़ उन के मुख से निकल कहीं बाबा जी को मुसलमान न कर डाले-एक समय बाबा जी तीर्थ यात्रा करते प्रयाग आये और किसी पंडे के घर निवास कर चलने का इरादा किया और पंडा से बोले "ईश्वर की कृपा से हमारा आप के घर निबाह भली भांति हुआ अब हमारी गवन करने की इच्छा है"—पंडा जी का ध्यान न जानिये कहां था निबाह को विबाह समझे और इसी ध्यान में बिगड़ कर ऐसा सोंटा बेचारे को मारा कि वह लहू लुहान हो गया और रोता हुआ "अरे तेरा शर्व नाश हो" कहता तूम्बी कम्मल छोड़ भाग गया—

ऊटपटांग।

सूझ तो है आज मुझे कुछ ऐसाही ऊटपटांग सूझी कि उसी का कुछ विस्तार कह सुनाय इस के बारे में आप से 'सार्टीफिकेट' सनद हासिल करूं कि मैं कहां तक ऊटपटांग बकने वाला हूं-संसार में मैं जहां तक देखता हूं मुझे तो सब अस्तव्यस्त और ऊटपटांग ही भासता है तो मालूम हुआ कि उस बड़े नट नागर खेलाड़ी को कुछ ऐसाही मंज़ूर है कि वह अपनी रचना में राजा से रंक तक, क्या स्त्री, क्या पुरुष, जलचर, नभचर, थलचर, किसी को न छोड़ा जिन में थोड़ा या बहुत इस ऊटपटांग का दखल न हुआ हो-यह अस्तव्यस्त नहीं तो और क्या है कि "काबिल में मेवा कियो ब्रज में कियो करील" अफ़-गानिस्तान ऐसी पर्वतस्थली जहां खूनी वर्फ गिरा करते हैं भीषण आकार विभीषण के मानो सहोदर जहाँ के मनुष्यों को देख भय होती

हे हे थियेटर-गरिष्ठ गुणाकरोऽसि ॥ १५ ॥
हे स्कूल-फूलवर, रूलर-रूलितोऽसि।
हे डंस-कैप धर, धूसर धूलितोऽसि ॥ १६ ॥
एतादृशस्तव-सुबोध-करस्तवस्ते ।
यस्तम्पठेद्भवति लब्ध-अनुग्रहस्ते ॥ १७ ॥
तस्याऽकुतोभय ! भवे न भवेद्भयस्ते।
जायेत सैवहि सदैव दयोदयस्ते ॥ १८ ॥
तन्त्वं गृहाण, कृपया, सदय स्वहस्ते।
हे डंस बंश अवतंश, नमोनमस्ते ॥ १८ ॥

लतीफे।

१-किसी के घर एक आज़ाद फकीर ने रोटियों के पिटने का शब्द सुन कर एक रोटी का सवाल किया-भीतर से लौंडी ने आकर कहा "अभी बीबी नहीं हैं" "आज़ाद बोला मैं बीबी को नहीं मांगता रोटी मांगता हूं"-लौंडी ने कहा रोटी अभी नहीं पकती हैं-आज़ाद बोला-"तो क्या किसी के ऊपर जूतियां पड़ती हैं" लौंडी भी ज़रा अपने को हंसोड़ लगाती थी चट जवाब दिया-कि "हां एक आज़ाद पकड़ा गया है उसी पर जूतियां पड़ती हैं" इसपर आज़ाद ने कहा कि "बीबी के साथ या लौंडी के" और अपना रासता लिया-

२-एक डाकटर साहेब कह रहे थे कि दिल की बीमारियां औरतों से ज़्यादा मर्दों में होती हैं यह सुन एक हंसोड़ मेम साहबा बोल उठीं कि तभी मर्द औरतों को बहुत दिल दिया करते हैं-

३-एक जुलाहे को एक बार घोड़े सवारी का शौक़ हुआ पर रुपया पास न था उस ने कुछ खेत ज़मीदार से लेकर बोये और मस्ज़िद में नित्य जाकर दुआ मांगने लगा कि या अल्ला मेरी खेती ऐसी होजाय कि मेरा पांव ज़मीन से दो हाथ ऊंचे रहे-संयोगबस पानी की कमी

से खेती खराब हो गई अब ज़मींदार ने मालगुज़ारी के लिये जुलाहे को पकड़वा के हाथ बंधवा कर लटका दिया तो आप कहते हैं कि "खोदा ने दुआ कबूल तो ज़रूर किया पर बात ठीक उस के समझ में न आई"

४-एक सेठ जी के घर में कुछ बेवकूफ चोर घुसे-सेठानी ने सेठ जी से कहा कि चोर आए हैं इस पर सेठ जी बोले कि कोई हर्ज़ नही ले जाने दो कल्ह पितर पख की अमावस है रूपये का रूपया भर तिल बिकेगा बस सब वसूल हो जायगा-चोरों ने देखा कि तिल ही ले चलो इस में पकड़ जाने का भी डर नहीं है और माल भी अच्छे हाथ लगेंगे—बस फिर क्या था चोर लोग एक एक बोरा तिल ले भागे और दूसरे दिन गंगा जी के तीर पर दूकान लगा दी-प्रातः काल सेठ जी भी धोती लोटा ले गंगा स्नान करने चले देखा कि तिल की दूकानें खुली हैं दूकानदारों से पूछा कहो भाई तिल क्या भाव-एक ने चट जबाब दिया रूपये का रूपया भर-सेठ जी ने पहचान लिया कि यह रात वाले चोर हैं और बोले कि भाई वह तो रात का भाव था अब तो दिन है उस की कहो——

५-एक मियां का तकिया कलाम था "आप के मुंह में" जब बोलते तो कहते "यह बात आप के मुंह में वह बात आप के मुंह में"-एक बार संयोग बश उन का नौकर कहीं चला गया-आप बड़े जोश में आकर उसे मारने के लिये घर ही से जूता हाथ में ले कर बदहवास चल पड़े-रास्ते में उन को एक मित्र मिल गये और पूछा "क्यों हज़रत इतना बौखल्ले से हुए आप कहां जाते हैं" मियां जी ने जबाब दिया कि कुछ पूछिये मत मैं ने एक नौकर रक्खा आप के मुह में सो न जानें कहां भाग गया आप के मुंह में उसी को तलाश करने जाता हूं अगर कहीं मिला तो इतने जूते लगाऊं आप के मुंह में कि साला बे दम हो जावै आप के मुंह में-इस पर उन के मित्र ने कहा अजी तुम्हारे मुंहमे॥

६-एक बंगाली बाबू के घर में चोरी हो गई-दूसरे दिन पुलीस ने तहकीकात करना आरंभ किया-बाबू साहब ने कहा जब चोर आया तो हम सब जागता था वो शाला अपने को वरा चलाक बूझता पर हम प्रेसीडेंसी कालिज में १२) रुपया महीना फीस देके परा हम से शाला

फीका है ; जिसे न रहने को घर है न पेट भर खाने को मयस्सर है वहां सुअरी के घेंटा से आठ २ दस २ बाप मा के आगे पीछे चल रहे हैं; यह भी सब क्या कुछ कम विटम्बना है इत्यादि सोचते जाओ तो इस ऊटपटांग का कहीं ओर छोर न पाओगे-

श्री कान्त पाठक

पौबारह ।

कानून में हिन्दी की चिन्दी बढ़ जाने से वकीलों की पौ बारह है-बहका के नये चेला मूड़ने वालों में दुर्भिक्ष के समय पादरी साहबों की पौ बारह है-गरमियों के दिनों में स्कूल के खेलवाड़ी आलसी लड़कों की पौ बारह है-अन्धों की समाज में कानों की पौ बारह है-मेले तमाशों में उचक्के बदमाश लम्पटों की पौ बारह है-चमड़े के रोज़गारियों मे डासन कंपनी की पौ बारह है-ऐसा ही जरमनी में संस्कृत की-राज कर्म चारियों में पुलिस के नौकरों की -हैज़ा तथा प्लेग के दिनों में डाक्टरों की-दैनिक पत्रों में पायोनियर की-मुहकमे दीवानी में हाईकोर्ट के जजों की-कपड़ा बुनने वाले और दूसरे कारीगरों में मेन्चेस्टर तथा ग्लासगो के जुलाहे बढ़ई या लोहारों की पौ बारह हैं-शरिस्ते तालीम में कोर्स की किताब गढ़ने वालों की पौ बारह है-इत्यादि-

श्री कान्त पाठक

दुःख से मुक्त होने का विचार ।

सुख दुःख का अनुभव जीव मात्र को है; इन दोनों में सुख से तो कोई कभी नहीं ऊबता बरन सब बहुधा यही चाहते हैं कि उन के सुख की सीमा अधिक होती जाय; रहा दुःख उसे कोई नहीं चाहता-जिसमें कोई बात भलाई की नहीं है सिवा इस एक बात के कि दुःख में परम प्रभु परमात्मा का स्मरण होता है जैसा कहा है "दुख में सुमिरन सब करें" सुख में करै न कोय-जो सुख में सुमिरन करैं तो दुःख काहे को होय"-अस्तु इस दुःख का कितना भारी परिवार है उसकी गड़ना तथा उस

के एक २ अंग का बिचार हम यहां पर नहीं किया चाहते केवल यही जानना चाहते हैं कि यह दुःख हमें क्यों होता है—मनुष्य अपने दुःख का कारण बहुधा आप स्वयं नहीं जान सक्ता जाना भी तो उससे अपने को छुड़ाना उसके लिये अति कठिन होता है; दुःख आ पड़ने पर दुखिया की बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है सिवाय हाय२ करने के उसे कोई उपाय नहीं सूझता—हमारे दुःखों के कारण से हमारे गुरुजन माता पिता प्रायः अवगत हो अपने लड़कों को चिताते रहते हैं कि "ऐसा न करो ऐसी राह न चलो दुःख पाओगे" इस समय भारत भूमि को जो चारो ओर से दुःख दबाये हुये है इस का कारण हम लोगों के अनेक दोषों का समुदाय प्रतीत होता है इसपर पाठकों को हम एक उपाख्यान कर्ण गोचर कराते हैं—

एक समय देवता, मनुष्य तथा राक्षस गण एकत्रित्त हो विचार करने लगे कि कौन सा ऐसा कारण है जिस से हम लोगों को दुःख होता है—सोचते २ यह ठहरा कि दुःखों का कारण निज कृत अपराध के अतिरिक्त और कुछ नहीं है—अपना दोष अपने को नहीं दीख पड़ता तो अब यह कौन बतलावेगा? सर्व सम्मति से यह निश्चय हुआ कि हम सबों का पिता एक परमेष्ठी पितामह ब्रह्मा है वही इस का उत्तर देगें और दयार्द्र हो दुःखों से पार जाने की वेही युक्ति बतावेंगे—यह दृढ़ निश्चय कर उक्त ब्रह्मा की दर्शन-कामना तथा ईष्ठपूर्ति के लिये घोर तपश्चर्या करने लगे-कुछ काल के पीछे प्रजापति ब्रह्मा सदय हो उन का मनोरथ जान साक्षात् अविभूर्त हुये और द यह एक अक्षर विशिष्ट शब्द कह पुनः अन्तर्हित हो गये—

अब तीनों समाज में खलबली मची कि ब्रह्मा ने क्या कहा—सब प्रथम देवतागण उक्त अक्षर का अर्थ विचारने लगे कुछ काल ध्यानावस्थित होने के अनन्तर यह कहने लगे कि हम लोग इन्द्रियपरायण भोग लिप्सू अर्थात् बड़े अदान्त हैं इसी से कर्त्तव्याकर्त्तव्य सब भूल कर दोषी बने दुःख पा रहे हैं बोध होता है कि भगवान् ब्रह्मा ने द से दमध्वम् अर्थात् दमन करो "इन्द्रियों का बेग रोको" यह उपदेश दिया है—

है वहां द्राक्षा, दाड़िम, पिश्ता, बादाम, ऐसे सुमधुर और पुष्टिबर्द्धक मेवे पैदा किये ; ब्रज भूमि जो ज़रखेज़ी और जलबायु तथा रामणीयक में एकता है वहाँ कटैले करील के वृक्ष उपजाये-और भी गुलाब ऐसे सुन्दर सुगन्धित फूलों की डाल में कांटे पैदा कर दिये-जैसा कविबर बिहारी ने कहा भी है-

को कहि सकै बड़ेन सों, लखे बड़ीही भूल।
दीनी दई गुलाब में इन डारिन वे फूल॥

ऐसेही कमल को जिसमें साक्षात् लक्ष्मी का बास है सुशमा और सौन्दर्य का मानो घर है पंक से उपजाया—केवल कमल ही पर क्या इस प्रकार की गड़बड़ी तो उस की सृष्टि में आजलौं बराबर होतीही जा रही है-जैसा कीचड़ से कमल को जन्माया वैसाही देखते हैं कि महा मूर्ख के घर में पंडित जन्मते हैं और जिन के कुल में सात पुश्त से बराबर सरस्वती की धारा का स्रोता अविच्छिन्न प्रवाहित रहा वहां एक ऐसा कट्टर मूर्ख पैदा हो जाता है कि सात पुश्त की विद्या मर्यादा और प्रतिष्ठा सब खो बहाता है-कोयल को ऐसा मीठा और सुरीला स्वर दे कि पिक बयन की उपमा दी जाती है रंग उस का कोइला सा काला कर दिया ऐसा कि कांव२ करने वाले काक और कोयल में कोई भेदही न रहा-अच्छा किसी कवि ने कहा है-

"विधिरेव बिशेषगर्हणीयः करट त्वं रट कस्तवापराधः।
सहकारतरौ चकार यः सहबासः सरलेन कोकिलेन"॥

हे करट तू कोकिला के साथ बैठ मन माना कांव२ कर तेरा इसमें कोई अपराध नहीं है; इसमें बिशेष निन्दनीय वह विधाता है जिसने आम की एक ही डाल पर तेरा बसोबास सरल कोकिला के साथ कर दिया—और भी—

"काकः कृष्णः पिकः कृष्णः को भेदः पिककाकयोः।
बसन्त समये प्राप्ते काकः काकः पिकः पिकः"॥

ऐमाही 'दाटयूह' नीलकण्ठ देखने में कैसा मनोहर पक्षी है पर कोकिला के मधुरालाप के सर्वथा विरुद्ध बोली उस की कैसी बेसुरीली कर्णकटु होती है—असावधान मनुष्यों के काम; दुःशील की जिह्वा; बिगड़ी हुई नवयुवतियों की चाल; नई रोशनी वाले नवयुवकों के विचार; तो मानो ऊटपटांग का बास स्थान या केन्द्र भाग है—इसका पता लगाना कठिन है कि ईश्वर ने किस हिकमत अमली से अपनी रचना में इस २ तरह की ऊटपटांग बातों को उठा के खड़ा किया सचेत सावधान को इस्से डरना अवश्य चाहिये—आलसियों के साथ इस का बन्धु का सा प्रेम रहता है और मुसीबतों का तो यह मानो पेशखीमा सा है—जिस छात्र की इस के साथ मैत्री हो गई वह अपने गुरु जनों को धोखा देने में एकता और परम प्रवीण हो निकलता है—कविवर गोलड्स्मिथ ने अपनी एक लइन में ऐसेही छात्र पर यह इशारा दिया है "I knew him well and all the truent knew" इस भांत हास्य प्रिय बड़ा कर्तार चुहल और मज़ाक करता हुआ अपनी बड़ी रचना के अनेक कारखाने Department इस ऊट पटांग और अस्तव्यस्त के खोल रक्खे हैं जिस का संग्रह इस श्लोक में अच्छा कर दिया गया है "सुकृतीगतायुः कृपणो धनाढ्यः" इत्यादि—सच है यह क्या कोई कम ऊटपटांग अथवा विटम्बना है कि एक सुकृती नर जिससे न जानिये कितनों का उपकार होता है अपने अखण्ड पुण्य का फल रूप उच्च कुल में जन्म पाय संसार में कीर्ति का वितान तान चट्ट विदा हो जाते हैं—पापी निकृष्ट नराधम जो न जानिये कितनों को दुःख का कारण हैं अजर अमर रहते हैं; एक बार साक्षात् अन्तक भी आवे तो उस का भी मुकाबिला करने को मुस्तैद रहते हैं—"न काटे कटै न मारे मरै, एक बार अन्तकहू से लड़ै" यह सब ऊटपटांग और विटम्बना नहीं तो और क्या है—ऐसाही कृपण मक्खीचूस जघन्य जिस ने रुपयेही को अपने जीवन का सर्वस्व मान रक्खा है माला माल रहता है धन उस के पास से टाले नहीं टलता; दाता उदार खाने खरचने वाला जल्द विलाय जाता है—और भी जो धन संपति में कुबेर की बराबरी कर रहे हैं मान और प्रतिष्ठा में जिन का दर्जा औव्वल है पर घर का एक चिराग न रहने से सब

मनुष्यों को यह सूझ पड़ा कि हम लोग स्वभाव से कृपण अधिक हैं-स्वार्थपरता की बासना उस से भी अधिक बढ़ गई है इसी से कदाचित हमें दुःख है-इस में सन्देह नहीं कि अन्तर्यामी ब्रह्मा हमारे मन का अभिप्राय जान गये तो ज़रूर उक्त अक्षर का वही अर्थ होगा जिस से हमारे दुःख दूर हो हमें सुख प्राप्त हो-इस लिये करुणामय ब्रह्मा ने हम को यह जतलाया है कि द् अर्थात् दद्ध्वम्-दान से परोपकार कर स्वार्थ त्याग की बुद्धि को वढ़ाओ-

निदान जब राक्षसगण ने विचार कर देखा तो उन्हे यह सूझ पड़ा कि हम लोग बड़े क्रूर हिंसक सब को प्रायः सताया करते हैं इसी से हमें दुःख है-ब्रह्मा केवल एक अक्षर द मात्र कह कर अन्तर्ध्यान होगया है-हम लोगों की मनोकामना उसे मालूम न थी ऐसा नहीं है उस ने द अक्षर से यह बतलाया है कि " दयध्वम् " दया करो दूसरों को पीड़ा पहुंचाना छोड़ो " ऐसा करने से दुःख दूर होगा; सुख शान्ति लाभ होगा-इस रीति से देव, मनुष्य तथा राक्षस गणों ने आप विचार किया और उस में जो ठीक जंचा वही किया जिस से उन का क्लेश दूर हो गया, सत्य है "जिन खोजा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ"

हम लोगों में सत्, रज, तम, इन तीन गुणों के उद्रेक से देवता, मनुष्य तथा राक्षस भाव क्रम से विद्यमान हैं, समय पाकर इन के लक्षण प्रगट होते हैं, सम्प्रति वह समय है जो तीनों भाव अपनी २ पूरी कला के साथ विराज मान हैं-प्रिय वाचक वृन्द! ज़रा खयाल तो कीजिये इन दोषों की जड़ कितनी मज़बूत हो गई है, रागद्वेष ईर्षादि का दल कितना बढ़ गया है सुतरां पंचमहापातक का घर यह भारत क्या कभी आकाल आदि दुःखों से बच सकता है? भाइयो! जब तक उक्त विषम भयंकर व्याधियों की चिकित्सा भली भांति न होगी, सच मानिये, हम लोग कदापि उन्नति नहीं कर सक्के कदापि दुःखों से मुक्त नहीं होसक्के! देखिये! विचारिये!

अनन्त राम पांड़े

निवासी रायगढ़

वृत्तियों का निरोध निरन्तर लाभ दायक नहीं है।

परमेश्वर ने हमें काम आदि ५ या ६ वृत्तियां दी हैं कि जिन के द्वारा हम संसार के सुखों का अनुभव करें किन्तु हम लोग उन का प्रयोग या बर्ताव ऐसा कुढंगे तौर पर करते हैं कि सुख के बदले इतना दुःख उठाते हैं जिस्से हमारा जीवन निःसार और ज़िन्दगी फीकी पड़ जाती है—उन वृत्तियों का कुढंगा वर्ताव बहुधा दो तरह पर होता है इन का अनुचित रीति पर काम में लाना या जितना और जहां तक उन्हे काम में लाना चाहिये उस्की सीमा को नांघ जाना—जैसा काम या लोभ दोनों ऐसे बुरे नहीं हैं जितना लोगों ने उन्हें बदनाम कर रक्खा है—जो वस्तु हमें प्राप्त नहीं है और जिस्की हमें बड़ी ही आवश्यकता है उस्को चाहना या उस्के लिये लोभ करना बुरा नहीं है पर वही हमारा चाहना या लोभ उस्से अधिक के लिये जितनी हमें ज़रूरत है और अनुचित रीति पर हुआ तो दुःख का कारण होता है—किसी मक्खी चूस कट्टर सूम लोभी ने प्रण कर लिया कि हम लाख या करोड़ रुपया जमा किये बिना न रहेंगे वह हर तरह की कंजूसी करता है कि अपने प्रण के अनुसार रुपया जमा करे—अस्तु उतना जमा कर वह फिर कंजूसी छोड़ उदार बन जाय सो होता नहीं किन्तु निनानबे के फेर में जो पड़ा सो पड़ा—उस्के लोभ का कहीं अन्त नहीं रहता वरन महमूद गज़नवी की भांत असंख्य धन जोड़ कर भी अन्त में रोता हुआ मरता है—ज्ञानियों ने जो इन्हें बुरा कहा सो इसी लिये कि इन काम क्रोध आदि के जाल में पड़ फिर जीव इस्से निस्तार या छुटकारा नहीं पाता बरन इन वृत्तियों के जाल में फंसा हुआ उस पथिक के समान है जो अपने हाथ से अपना पांव काट चलना चाहता है—ऐसा ही क्रोध और मोह के सम्बन्ध में भी देखा जाता है कि क्रोध या मोह दोनों उचित बात के लिये और उचित सीमा तक बुरे नहीं बल्कि एक गुना भलाई के लिये हैं—हिन्दुस्तान जो इस समय इस बुरी दशा में आ गया इस्का यही कारण है कि इसे अनुचित पर क्रोध हुई नहीं न इस्को अपने पर या अपनी किसी बात पर ममता बाकी रही—स्वत्वाभिमान की तो कहीं जड़ भी न रही—जब से भारत इन तीनों को खो

बैठा तब से यह बराबर पराधीन हो नीचे को गिरता ही चला जा रहा है इसी से हम यही निश्चय करते हैं कि वृत्तियों का दबाना निरन्तर उपकारी नहीं है-ग-प्र-मि-

---

एक अनोखा सपना ।

दिन के कामों से थक सांझ को यह सोच चली ज़रा दुनियां की चहल पहल देखें-छाता उठाय घर से निकल पड़ा रास्ते में एक मित्र से भेंट हो गई आज कल जैसा व्यर्थ बकवाद करने की रीति निकल पड़ी है कहावत है "झोंकैं भार सपना देखैं महलों का" मित्र के साथ लम्बी चौड़ी हांकता हुआ बे सिर पैर की चिड़िया उड़ा रहा था-संयोग बश सामने नीम के पेड़ तले एक बाबा जी आसन जमाये बांस के छाते के नीचे लम्बी २ जटा बढ़ाये शरीर भर में रामरज पोते बैठे थे-भारद्वाज मुनि के आश्रम के समीप इस साधू को बैठा देख अचानक मेरे चित्त में आया कि हाय वह समय अब कहां गया कि इसी स्थान पर कैसे २ महात्मा योगीश्वर बास करते थे-यदि मैं ऐसे आभागे को पूर्व काल के उन महात्माओं में से किसी से भेंट होती तो उन के चरणों पर गिर उन से सविनय पूछता कि मुनिवर हम लोगों के दुःख की कोई सीमा है कि नहीं ? हमारे इन दुःखों का कारण क्या है ? और इस का यदि कोई प्रतीकार हो तो कृपा कर बताइये-दया सागर मुनिवर को अवश्य हम पर दया आती और अपने सदुपदेश द्वारा हमारा आंसू पोंछते-किन्तु क्या किया जाय ऐसे २ महात्माओं से भारत सूना न हो जाता तो हम को इस तरह गिड़ गिड़ाने और रोने की आवश्यकताही क्या थी-इस २ तरह के खयालों में मैं ऐसा मग्न था कि एक २ पांव मानो मन २ भर के हो गये एक पग भी आगे जाने का मन न चाहा निदान घर की ओर मुड़ना पड़ा-घर तो किसी भांति पहुंचा पर मन ऐसा व्यथित हो रहा था कि कोई काम न कर सका कपड़ा उतार चार पाई पर लम्बे हो गये-मन में जब कोई बात जम जाती है तो लाख यत्न करो वह नहीं भूलती-अब तक मैं उन प्रेमियों को हंसता था जिन का मन अपने प्रेम पात्र को छोड़

और ठौर जानाही नहीं चाहता–जिन को हवा भी खिड़कियों को खट खटाय धोखा दिया करती है; जो प्रत्येक प्राकृत पदार्थों में उसी अपने मन मोहन को देखा करते हैं; जिन को स्वप्न में भी अपने प्रियतम का प्रेमालाप स्वर्ग के सुखों को भी धता बोलाता है–कहां तक कहें सिवा उस प्रेमी के उन को सारा संसार असार और फीका जंचता है–अब मुझ को उस का अनुभव अच्छी तरह हो गया कि आदमी का मन जो चाहे सो करावे–

"मन एव मनुष्याणां कारणं वन्धमोक्षयोः।
मनः कृतं कृतं लोके न शरीरकृतं कृतम्'॥

मन जब इधर उधर दौड़ते थक जाता है तो जहां कहीं बैठा वहीं का हुआ–"जहां जाके बैठे वतन हो गया"–यदि बिश्राम का वह स्थान मनोहर हुआ तो फिर क्या वहीं के भूत हो गये अड़ियल टट्टू के नाईं अड़े सो अड़े–बैठे हैं कूचये यार में हम को कोई हटाये क्यों–

अस्तु इस २ तरह के ऊहा पोह से खिन्न देख निद्रा देवी ने अपत्य स्नेह के समान मुझे अपने गोद में उठा लिया और बायुने मुझे हलके २ थपकी देकर सुला दिया–किन्तु हाय! कैसे शोक की बात है कि जिन का मन दुःखित रहता है जिस ने एक बार भी चिन्ता की चटनी चाटी क्या फिर कभी उस को सुख मिल सक्ता है–उन का मन ऊसर सदृश हो जाता है वहां चाहो जितना सुख की वृष्टि हो सब बिफल होती है–उस के मन की कली फिर बिकसित नहीं होती; सोते जागते कभी भी उसे चैन नहीं–बस यही हाल हमारा हो गया निद्रा का शरण लेने पर भी सुख न मिला सांयकाल के बिचारों ने एक ऐसा रूपक बांधा कि हम कहां हैं कुछ सुध न रही और यह स्वप्न देखने लगा–

मुझे ऐसा मालूम पड़ा कि मैं किसी पहाड़ी नदी के तट पर जो बर्षा के कारण बड़े बेग से बह रही थी बैठा हूं और उस के प्रबाह की ओर ध्यान दे यह सोच रहा हूं कि भारत की दशा इस के प्रबाह में कैसा प्रतिबिम्बित हो रही है–जैसा इस समय यह ज़ोर शोर से बह रही है मानो समुद्र को भी कुछ माल नहीं समझती ऐसाही भारत भी

किसी समय आनन्द से सब ओर से भरा पूरा था किन्तु भारत जैसा इन दिनों हीन दीन हो गया ऐसेही कुछ काल में यह भी ऐसी हीन दीन हो जायगी कि एक चींटी भी इस को पार कर लेगी—एक समय वह भी था कि एक बुंद पानी इस में न था बर्षा होते ही यह उमड़ उठी—भारत के दिन भी कभी ऐसाही लौटेंगे? इतने में किसी ने मेरी पीठ पर थपकी सा दे कहा कि चिन्ता से तू इतना बेहाल हो गया कि भारत की तुलना एक क्षुद्र नदी से करने लगा—वीरप्रसविनी रत्न गर्भा जहां की भूमि विद्वानों की पाठशाला थी; जहां की समृद्धि ने देश देशान्तरों को अमीर बना दिया; उस की तुलना एक छोटी नदी से क्यों कर जोड़ खा सकती है जो थोड़ी सम्पत्ति पाय उमड़ा चलती है—जो तू यह कह रहा कि हाय भारत के वे पुराने दिन फिर कभी आवेंगे सो तू भूल रहा है वे दिन कहीं गये नहीं किन्तु अफ-सोस वे लोग, वह विद्या, और वह मर्यादा न रही—यहां अब कहने वाले बहुत हो गये कर के दिखाने वाले कोई नहीं—यहां के लोग बिना बिचारे सर्वस्व खो बैठे अपना पैर अपने हांथ काटा—यह कह वह आगान्तुक रोने लगा; यह तपस्वी महा वृद्ध बरौनी तक के बाल जिस के सन से सुफेद हो रहे थे किन्तु मुख इस का मानो तेज का पुंज था इस का हृष्टपुष्ट शरीर देख मन में श्रद्धा और भक्ति का संचार होता था; हांथ में कमण्डलु और दण्ड लिये थे जिस को देख मैंने आदर पूर्बक प्रणाम किया और हांथ जोड़ बोला—भगवन् आप का आश्रम कहां है? पूर्ब जन्म में मुझ से कौन सा ऐसा काम बन पड़ा कि श्रीमान् ने स्वयम् अपना दर्शन दे मुझे कृतार्थ किया; आप मेरे मन का भाव कैसे जान गये जो मेरी इस प्रकार भर्त्सना कर रहे हैं? यह सुन वह महात्मा कहने लगे—

वत्स हम लोगों का आश्रम यही भारत भूमि है जिस के निमित्त तू अभी इतनी चिन्ता कर रहा था—यह भूमि अब की सी पहले न थी सो तो तुम्हें विदितही है इस लिये इस विषय में हम कुछ कहना नहीं चाहते; किन्तु इन दिनों देश की दुर्दशा देख यहां न ठहर सका; शोक का बेग इतना प्रबल हो जाता है कि तपस्या में बिघ्न

होता है तो बनान्तरों में जा कालक्षेप करते हैं—

स्वामिन् आप कहते हो भारत की दुर्दशा देख शोक होता है तो क्या आप की ममता इस पर कुछ कम हो गई—पहले के महात्मा लोग आकर अपने सदुपदेश से यहां के लोगों को सुचेत किया करते थे; अब हम लोगों से कौन से ऐसे पाप बन पड़े जो ऐसों का दर्शन दुर्लभ हो गया—इसी तरह कभी २ आप दर्शन दे कृतार्थ करते रहें तो हमारे दुर्दिन दूर भाग जांय—

महात्मा—बेटा न हमारी ममता इससे हटी न यहाँ के निवासियों से; परन्तु यहां के लोगों को अब श्रद्धा तथा विश्वास न रहा; हम अपनी बातें जो उन्हें सुनावें तो वे हमें बूढ़ा होने से कम अकिल कह कर चुटकियों में में उड़ावें; इसी से यह सोच कि इन्हें अभी भुगतने दो पीछे स्वयं सुधर जांयगे; अभी इस समय हम लोग इन के लिये कुछ नहीं किया चाहते—शोक ये अपना कल्याण तो चाहते हैं पर अनेक कुसंस्कार जिन्हें इन्होंने अपना कर मान लिया है उसे छोड़ने का मन नहीं करते बल्कि इन्हें इतना ज्ञान तक नहीं है कि वे कौन २ बातें हैं जो कुसंस्कार के नाम से कौमी तरक़्क़ी के मैदान में हमें सब के पीछे हटाये हुये हैं—जो कोई जानते भी हैं तो इन दिनों की सभ्य समाज में जीट उड़ाये जाने की डर से उसे प्रकाश करते सकुचाते हैं इस लिये की नक्कटों के जमात में नाक वाला नक्कू कहला कर बदनाम किया जाता है—तुम जो उन्हें जानना चाहते हो तो हमारे साथ हो लो—सावधान रहना जो दृश्य तुम देखो उसे देखने मात्र से काम रखना कुछ बोलना नहीं—बहुत अच्छा जो आज्ञा—यह कह मैं उन के साथ हो लिया; मार्ग में जाते हुये मैं ने उस महात्मा से फिर पूंछा; दयालो यह मैं जान सकता हूं कि वे कौन से कुसंस्कार हैं और कहा से वे मुझे बे मिले कृपा कर आप बता सकते हैं ?

महात्मा—अभी चल कर तुम आप ही सब देख लोगे—यह कह महात्मा चुप हो गये और चलते हुए हम दोनों एक पहाड़ी के पास पहुंचे जहां चारो ओर ऐसा सघन बन था कि मुझे अचरज हुआ और मन में सोचने लगा कि ऐसे अगम्य स्थानों में भी पुण्यपुंज महात्मा जन

कैस सुख से विचरते हैं–आगे बढ़ एक पगडंडी मिली उसी से हम दोनों उस पहाड़ी पर चढ़े जहां पहुंच क्षुद्रवाटिका सा बड़ी रमणीक एक स्थान मिला जिस्के एक कोने एक छोटी सी कुआं थी और तीन कोनो में पर्णशालायें बनी थीं–बीचो बीच इस वाटिका में एक मन्दिर सभा मण्डप सा बना था जिस्में हवन का एक कुण्ड था; चारो ओर जिस्के कुशा बिछे हुये थे; महात्मा मुझे वहां ले गये और पास के वृक्ष पर फैली हुई किसी जंगली लता से एक पत्ती तोड़ मल कर मेरे नेत्रों में उस्का रस अंजन की भांति लगा दिया; जिस्का कुछ ऐसा प्रभाव था कि जिधर मैं देखता उसी ओर कोई न कोई एक चित्र मुझे देखाई देता था–सब के पहिले जो चित्र मैं ने देखा वह यह था कि सजे से एक कमरे में एक नव युवती पृथ्वी पर बैठी है और एक बूढ़ी स्त्री उस के सिर पर हाथ रक्खे उसे समझा रही है–यह बूढ़ी पातिव्रत की मानो मूर्ति थी जिस्का दर्शन कर मुझे ऐसी श्रद्धा हुई कि मै सिर झुकाय मन ही मन उसकी बन्दना करने लगा–विशेष ध्यान दै सुनने लगा तो ऐसा मालूम हुआ कि यह मानो उस युवती से कुछ कह रही है–पुत्री यही अभागे तेरी यह दशा कर अपने और तुम्हारे दोनों के दुःख के कारण हुये–तू चाहे कितना ही साध्वी पतिव्रता बनने की चेष्टा कर पर ये यवनों की चाल ढाल देख स्त्रियों को दूषित ही मानते हैं–यदि इन से कहो कि स्त्रियों को क्यों इतना कैद में रखते हो तो कहेंगे कि क्या हम लोग अंगरेज़ हैं जो मेम साहेब को टम टम पर सवार कराय हवा खिलाने लै जांय–हे जगदीश भारत महिलाओं से तुम क्यों इतना रूठे हो कि यहां के पुरुष व्यक्ति को बुद्धि न दै उन अबलाओं की दुर्गत करा रहे हो जिन्में पुरुषों की अपेक्षा धर्म कर्म की मर्यादा अभी तक बनी है; सीता सावित्री सती अरून्धती इत्यादि के रक्त इन की रक्त संवाहिनी शिराओं में पुरषों के रक्त की भांति शीतल नहीं हुये–किन्तु शोक होता है कि बड़े से बड़े अपराधी को भी इस तरह के कैद का दण्ड नहीं दिया जाता जैसा इन कुल कामिनियों को दिया जा रहा है–कि सूर्य चन्द्रमा भी जिन की छाया तक नहीं पाते–स्पर्शवान् होना वायु का एक साधारण गुण है "श्वसनः स्पर्शनो वायुः" अभिधानावली

में स्पर्शन वायु का एक नाम ही हो गया है सो उस वायु को भी इतनी हिम्मत नहीं होती कि इन्हें छू सके-हमारी कुल कामिनी स्त्री जाति सुलभ लाज शरम को यदि खो बहाय कुल की कान्ह न रक्खा चाहें तो ये मुये उन्हें क्या रोक सक्ते हैं; ये सिर पीटते ही रह जांय वे अपने मन की कर गुज़रें-हमारे में कोई २ असती जिन्हों ने लोक लाज और कुल कान्ह को कुछ माल न समझा अपने मन की करी डालती हैं उन से उन का कुछ बस नहीं चलता-क्याही अच्छा चित्र कवि ने उरेहा है:-

"अति बिनय वामनतनु र्विलंघयते गेह देहली नवधूः।
अस्याः पुनरारभटीं कुसम्भवाटी विजानाति"॥

घर में ऐसा झुक के चलती हैं कि देहली भी नहीं नाघ सकतीं किन्तु इसकी शठ खेलियां वह फूलवाड़ी जानती है जहां जार के साथ इसका संकेत निश्चय किया गया है-इन मूर्खों को स्त्रियों की ओर से न जानिये कैसे बुरे खयाल मन में धंसे हुये हैं कि स्त्री मात्र सब कुचरित्रा और असती होती हैं और समझते हैं बस इन्हें घर के भीतर बन्द रखनेही से हमारा कल्याण है-यह कभी इन के मन में न आया कि केवल परदे से इन के चरित्र की रक्षा उतना भली भांत नहीं हो सकती जितना सभ्यशासन और उत्तम शिक्षा के द्वारा इन में मानसिक शक्ति की उत्कर्षता से चरित्र की रक्षा होना सम्भव है-सो उसका यहां सर्वथा अभाव है जिस समय हमारे में मानसिक शक्ति उत्कर्षता को पहुंची हुई थी उस समय में हम साक्षात् सरस्वती का रूप धारण कर शंकर स्वामी से विद्वान् दार्शनिकों के छक्के छुड़ा दिये थे-मैत्रेयी और लीलावती सरीखी कितनी यहां हो गईं इसे कौन नहीं जानता-पर अब तो ये वर्तमान भारत सन्तान सब भूल गये केवल दो बात इन्हें याद रही; यातो मुसलमानों का परदा कि स्त्रियों को तालों में बन्द कर रखना या साहब बन ब्रूहम पर बैठाय हवा खिलाना-अपनी निजकी चाल ढाल कहीं नाम को भी न रही यह कह वह वृद्धा न जानिये कहां लीन हो गई मेरी भी अचानक नींद टूट गई देखा

तो न वह स्थान है न वह महात्मा मैं अकेला खाट पर पड़ा तारे गिन रहा हूं-किन्तु पूज्यपाद उस वृद्धा रमणी की जो बातें सुना था उन पर मेरे मन में अनेक तर्क वितर्क उठने लगे और यही ध्यान में आया कि महात्मा का यह कहना कि हम लोग अपने आप अपनी तरक्की नहीं करते बहुत सच है-स्त्रियों के परदे के सम्बन्ध में जो मुझे यह दृश्य अभी देख पड़ा मानो एक उदाहरण था कि तुम्हारे एक भी संस्कार सुडौल नहीं हैं-खान, पान, रहन, सहन, बात, व्योहार, सब में हम लोग बिगड़ कर इसी तरह दो दल हो गये हैं; अधिकांश तो हम लोगों में वेही हैं जो पुरानी लकीर के फकीर बने बैठे हैं; बाप दादों के समय से चली आई बिगड़ी चाल पर बराबर चलते जाते हैं बाल बराबर भी उस से इधर उधर नहीं टसका चाहते-थोड़े से ऐसे लोग भी हैं जो समाज के बन्धन से मुक्त हो छंदान को तोड़ निकल भागे हैं; सींग कटाय बछड़ों में दाखिल होने की भांत पश्चिमी सभ्यता का जामा पहन अपना रूप, रंग, चाल, ढाल, सब बदल डाला तुर्त के आये अहल विलाइती साहब बन गये; लाचार चमड़ा गोरा न कर सके क्या किया जाय जो कुछ कुदरती है उस से अपना कोई बस नहीं-पुराने क्रम वाले सैकड़ों बर्ष से यवनाक्रान्त हो अर्द्ध यवन बन रहे हैं शुद्ध आर्य और स्वच्छ आर्यता का आभास भी बाकी न रहा-पुराने लोगों की पतित मण्डली उसी अर्द्धयावनिक बिगड़े क्रम को गाल फुलाय २ हिन्दूपन कहती है जिस की नस २ में दास्य भाव और गुलामी झलक रही है; उत्तेजना और गरमाहट कहीं नाम को भी न बच रही-पुराने वैदिक समय के ऋषियों ने जाति पांति खान पान में विवेक आदि जिन २ बातों को आर्य जाति की श्रेष्ठता और श्रेणी बद्ध रह उन्नति का मुख्य द्वार समझा था वही इस अब के यावनिक क्रम में हमारी कौमी कमज़ोरी का बाइस हुई-जो बात आर्य जाति के सर्वोत्कर्ष होने के लिये स्थापित की गई थी वही अब धर्म का एक अङ्ग बन हम से महा अधर्म करा रही है-हमारे मन में नहीं आता कि यह क्योंकर धर्म है और कैसे सर्वान्तर्यामी सर्व्व साक्षी परमेश्वर इस से प्रसन्न होता है कि हम एकही श्रेणी के या एकही जाति के दो

भाई हैं और खान पान में हम एक दूसरे को नीच और पतित कह रहे हैं—हम अपनी हिन्दू जाति पर इसे ईश्वर का बड़ा कोपही कहेंगे कि एक जाति या एक श्रेणी वाले सहभोजन में एक दूसरे से छिन्न भिन्न हो फूट की बेल को खूब बढ़ाते जाते हैं; वही दूसरे छोर वाले साहब बन सर्व भक्षी होने में ज़रा नहीं सकुचाते—बड़ी २ उपाधियां जो पहले कर्म और योग्यतानुसार एक २ घराने के कुलीनता की बोधक थीं अब इस पश्चिमी सभ्यता में नाम के दो अक्षर के साथ वे बड़ी सी बड़ी उपाधियां केवल पहचान के लिये रहीं जैसा कुलपांसन चतुर्वेदी का के-पी-चतुर्वेदी इत्यादि—हम विशेष अपराध इस में अर्द्धयवन अशिक्षित पुराने बुड्ढों ही का कहेंगे नीति है—"सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डितः" ये क्यों समाजको इतनाकसे हुये हैं—हमारे नव शिक्षित सन्तान इतनी कठिन कैद से ऊब छिटक कर न निकल भागें सो हम क्यों न करैं जिस में वे हमारी मूठी के बाहर न हों—उचित है एक २ श्रेणी या एक जाति वाले परस्पर का सहभोजन जारी करदें जैसा ब्राह्मण, ब्राह्मण, क्षत्री, क्षत्री, वैश्य २ इत्यादि तो इस तरह के अनाचारी सर्वभक्षी हमारे सन्तान कदाचित् न हों; और यह धर्म शास्त्र के विरुद्ध भी नहीं है बरन कच्ची और पक्की सखरी निखरी जैसा इस समय इस प्रान्त के कुलीन घरानों में प्रचलित है इस का मूल धर्म शास्त्र के किसी ग्रन्थ और किसी स्मृति में नहीं पाया जाता—इसी तरह बाल्य विवाह रोक दिये जांय तो विधवा विवाह की आवश्यकता न रहे इत्यादि अनेक बातें हैं जिसका लिखना विस्तार भय से हम केवल गाई गीत सा मानते हैं—इसी सब को उस महात्मा ने कहा था कि तुम अपने कर्म से आप बिगड़ रहे हो और वेही सब कुसंस्कार के नाम से कहलाये जाते हैं—ये सर्वभक्षी फिर भी भले कि इनके रुधिर में शिक्षा के प्रभाव से उष्णता और उत्तेजना तो आती जाती है; अधर्म को धर्म मानने वाले गोबर गनेस पुराने इन अर्द्धयवनों में तो सो भी नहीं है क्या देख पढ़े लिखे समझदार को इन की ओर श्रद्धा हो—लाचारी है इन्हें वृद्ध समझ न माने तो सपूती में बट्टा लगे—इति० एक सनकी—

नई बस्तु की खोज।

मनुष्य को नई २ बातों के सुनने को नये २ दृश्य देखने को नई २ बात सीखने की सदा लालसा रहती है—इन नई २ बस्तुओं की खोज परिपक्क बुद्धि के हो जाने पर उपजती हो सो नहीं किन्तु लड़कपनेही से जब हम अत्यन्त सुकुमार मति रहते हैं तभी से इस का अंकुर चित्त में जमने लगता है—कोई लड़का कितनाही खेलवाड़ी और आवारा हो या किसी नीचे से नीचा काम में क्यों न लगा हो उस में भी उस को नये रास्ते की खोज अवश्य होगी—हम ने देखा है जो लोग दिन भर कोई फाइदे का लाभ दायक काम नहीं करते वरन खेलही कूद में समय गवांते हैं उन को भी जिस दिन कोई नया तरीका खेलने या दिल बहलाने का मिल जाता है उस दिन उन की भी खुशी का हाल न पूछिये—परन्तु विचार कर देखिये तो निरे खेल ही कूद में दिन काटना मनुष्यत्व और मनुष्य शब्द के अर्थ पर आक्षेप करना है—क्योंकि हमारे यहां के पूर्व कालिक विद्वानों में आदमी का पर्याय मनुष्य जो रक्खा है वह यही देख कर कि आदमी अपनी भली बुरी दशा सोच सक्ता है—उस के चारो ओर जो संसार के प्राकृतिक कार्य हो रहे हैं उन का भेद ले रहा है; उन की असलीयत दरयाफ्त करना चाहता है; नित नई २ बिद्या और बिज्ञान को वृद्धि करता जाता है; अपनी ज़िन्दगी को मज़ेदार करने की ज़रूरियात पैदा करता जाता है; और अपने सोचने की शक्ति के बल उन ज़रूरियात को पूरा कर अपने जीवन को आराम और सुख देने का ढंग भी बढ़ाता जाता है—आज जो सैकड़ों तरीके आराम पहुंचाने के हम लोगों को मालूम हैं पहले के लोगों को केवल वे मालूमही नहीं थे वरन स्वप्न में भी उन के ध्यान में कभी नहीं आये थे—कुछ ऐसा मालूम होता है कि आदमी का दिमाग कबूतर के दरबों सा है जिसमें एक समय केवल थोड़े से कबूतर और उन के अंडे बच्चे रह सकते हैं फिर ज्यों २ इन कबूतरों की सृष्टि बढ़ती जाती है त्यों २ दरबे के खाने भी बढ़ते जाते हैं—कदाचित् इसी प्रकार की दशा आदमी के दिमाग और उसमें भरे हुये विषयों की भी हैं—आप हमको डारविन साहब का पक्का चेला मत समझ लीजियेगा; हम यह नहीं

मानते कि पहले लोग कम सोचते थे तो वे बन्दर थे और अब हम लोगों के सोचने के विषय अधिक हो कर हमारे मस्तिष्क को अधिक पुष्ट कर डाला इस लिये बन्दर से आदमी हो गये ! ! अस्तु इस बात के मानने में आप को किसी तरह का उजुर न होगा कि अब देखतेही देखते इसी नई २ उमदा २ चीज़ों की खोजने हज़ारों नई २ विद्या निकाली हैं-हमारा केवल विज्ञान सम्बन्धी ही विद्या से प्रयोजन नहीं है किन्तु वे सब शास्त्र और विद्यायें जो मनुष्य को घर गृहस्थी में उठते बैठते चलते फिरते प्रति क्षण काम में आसक्ती हैं और न इसी बात के स्वीकार करने में आप को कुछ एच पेच होगा कि इन्हीं सब नई ईजादों का यह फल हुआ कि आदमी की अधिक फुरती या चालाकी पर मानो सान सी रख दी गई है-हज़ारों नये २ शगल सैकड़ों नये २ धन्धे लोगों को बझा रखने के ऐसे निकले हैं कि पूर्व्व कालिक समाज की गढ़न के लिये उन का उपयोगी होनाही असम्भव था "सर्व्व साधारण के हित की चीजें" इस जुमले को जितना हम लोग अब सुनते हैं और जितना पिष्ट पेषण इसपर अब होता है उतना पूर्व्व कालिक लोगों के रहन सहन के ढंगही पर ध्यान देने से मालूम होता है कि सर्व्वथा असम्भव था—इस समय यह "सर्व्व साधारण" का वह प्रबल समूह है जिसने हम लोगों के लिखने के ढंग को, पढ़ने के ढंग को, सोचने की प्रणाली को, पुस्तक और किताबों के विषय को, भीतर बाहर घर द्वार के बर्त्ताव को, आने जाने उठने बैठने रहने सहने के तरीके को, निज के और विदेशीय लोगों के सम्बन्ध को, कहां तक गिनावें देश के देश की दशा को कुछ अनोखे नये सांचे में ढाल डाला है-और आशा है कि समाज की पुष्टता के साथही साथ इस ढांचे का रूप रंग और भी दिन प्रति दिन एंव पेंचदार होता जायगा-और सब बातों को अलग रख छापने ही को लीजिये जिस ने लोगों के लिखावट का ढंगही और का और कर डाला ; नये २ विषयों की हजारों किताबें और पुस्तकें निकल चुकी हैं फिर भी लोगों को प्रत्येक विषय के नये २ प्रस्ताव पढ़ने की इच्छा शान्त नहीं होती—शान्त होने की कौन कहे वरन बढ़ती ही जाती है; क्योंकि यह शिकायत बहुधा लोगों के मुह से

सुनने में आती है कि कोई नई किताब होती तो पढ़ते–हम लोगोंने चोटीले से चोटीला प्रस्ताव लिख २ दिमाग पिच्ची कर डाला फिर भी पाठकों को फड़कते हुये मज़मून का आर्टिकिल पढ़ने की इच्छा शान्त न हुई।

अस्तु हम प्रस्तुत का अनुसरण कर नये २ धन्धों का हाल लिखते हैं–इसे सब लोग मानते हैं कि जो लड़का ताश शतरंज या चौसर खेला करता है वह समाज में बड़ा आवारा और निकम्मा समझा जाता है–हम ने पेरिस के कुछ लोगों का हाल पढ़ा है कि रोज़ सुबह उठ कर एक तशतरी में खेल के सब सामान रक्खे हुये (जैसा दो चार गड्डी ताश शतरंज की बिसात और मोहरे आदि) बाज़ार में घूमते हैं–बेकार अमीर लोग उन को अपने घर बोलाते हैं; उन के खेल की शरह है जैसा दो घंटे का पांच रुपया; जो लोग उन को बुलाते हैं वे इसी हिसाब से देते हैं; वे लोग अमीरों के खेलने के वक़्त हंसी के किस्सों से खेलने वालों का दिल बहलाया करते हैं–आप ने नौवाबों के "दस्तर खान के बिल्लों" यानी मुफ़्त खोरों का हाल सुना होगा परन्तु इन पेरिस के मसखरों के टक्कर के लोग शायद हिन्दुस्तान में न निकलैंगे–जिन्हों ने साधारण खेल कूद में आमदनी की एक ऐसी सूरत अपने लिये निकाल लिया है कि जितनी आमदनी इस देश में बड़ी मेहनत के साथ दिमाग पिच्ची करने पर भी नहीं हो सक्ती–सिवा इन के बड़े २ अमीरों को नाचना गाना सिखलाने वाले उस्ताद, बाल में उमदा वर्ताव सिखलाने वाले उस्ताद, मेमों से उमदी तरह सहूलियत के साथ हाथ मिलाना सिखलाने वाले उस्ताद अनगिनती पड़े हैं–आप को शायद ऐसे लोगों के सिखलाने पढ़ाने का मोल भी सुनने की इच्छा होगी प्रायः तो दो गिनी फी घंटा निर्ख है और बड़ा आसानी मिलने से इस का दूना चौगुना हो सक्ता है–

शायद आप कहैं ऐसे लोगों में मनुष्य के सर्वोत्कृष्ट गुण अर्थात् उत्तम २ विषयों के सोचने की शक्ति तो बहुत खूबी के साथ नहीं पाई जाती अंगरेज़ी में मनुष्य के लिये जो शब्द "मैन" है क्या उस के माने सोचने वाले के नहीं हैं? इस का उत्तर हम यही दे सक्ते हैं कि

मनुष्य मात्र के लिये संभव नहीं है कि सबी मुनि "मनन शील" हों—फिर केवल यही बात नहीं है कि मनुष्य खेलही कूद या दूसरी सुहूलियत और आराम देने वाली बातों में नई चीज़ की खोज में लगा है; किन्तु जो बड़े २ गूढ़ और सूक्ष्म विषय हैं उनके सोचने वाले भी नित्य नये रास्ते निकालतेही जाते हैं—आज आदमी के पैदाइश की "थिओरी" निकली कल चन्द्र लोक में किस प्रकार की बस्ती है या हई नहीं; परसों सूर्य मंडल किस पदार्थ का बना है यह सोचा जाता है; अथवा पदार्थ की चतुर्थ अवस्था दर असल कोई बस्तु है या दार्शनिकों का खयाली पुलाव है; या बुद्धिमानोंने अटकल पच्चू पदार्थ की एक दशा का नाम रख दिया है; ऐसी २ नित्य एक से एक अचंभे की नई २ बातें सुनने में बराबर आती जाती हैं—इस लिये यदि कोई यह कह दे कि आज विज्ञान या मनुष्य की कोई विद्या अपने हद्द को पहुंच गई तो यह बड़ी भूल होगी—हम तो कुछ ऐसा सोचते हैं कि मनुष्य का जन्म ही नई २ चीज़ों के खोजने के लिये हुआ है; इसी से यह सिद्धान्त बड़ा पक्का मालूम होता है कि "दुनिया रोज़ २ तरक्की पाती जाती है" और जो बातें पहले के लोगों के कभी मन में न आई थीं उन्हें अब हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं—जब बड़े २ लोगों का यह हाल है कि दिन रात उमदा २ नई २ चीज़ खोज रहे हैं तो हम आप किस गिनती में हैं; कोई बात जो किसी फ़ाइदे की न सोच सके तो दिल बहलाव के क्रम पर नये ढंग का यह लेख ही सही आप के नज़र है—

गवर्नमेंट का शिक्षा विभाग की ओर औदासीन्य

जितना और २ महकमों की ओर सर्कार दत्त चित्त है उतना सरिश्ते तालीम की ओर नहीं मालूम होती अंगरेज़ी राज्य यहाँ ईस्ट इंडिया कम्पनी का स्थापित किया है जो ब्योपारियों का एक समूह था; यद्यपि अब उन ब्योपारियों का कहीं नाम निशान भी न रहा किन्तु कम वही चला जाता है इसी से गवर्नमेंट हमारा शासन बनियों की पालिसी के अनुसार किया चाहती है—जैसा रोज़गारी जिसमें कुछ

फ़ाइदा देखता है उस रोज़गार की अधिक वृद्धि करता है; जिसमें लाभ की संभावना नहीं बरन पास का कुछ जाता है उस व्यापार की ओर ध्यान नहीं देता ; वही हाल शिक्षा विभाग का भी है–और २ महकमे जैसा आबपाशी अदालत दीवानी इत्यादि ऐसे महकमें हैं कि सर्कार को खरचा बरचा अदा होजाने के उपरान्त बहुत कुछ बचत हो जाती है–विचार कर देखो तो गांठ का इसमें भी अधिक नहीं जाता क्योंकि मदरसाना सड़काना चौकीदारी इत्यादि कई प्रकार के टैक्स ज़मीदारों से माल गुज़ारी वसूल करते समय ले लिये जाते हैं–दूसरी बात एक यह भी है कि शिक्षा विभाग निरा देशी लोगों के फाइदे का है इन को जो शिक्षा मिल चुकी वह बहुत है अब अधिक इनमें तालीम की तरक्क़ी हो के क्या होगा—इतने ही से कंपिटीशन में बहुधा ये लोग विलायत वालों के आगे निकल गये हैं अब कहां तक आगे बढ़ते जांयगे–इससे Mass educatien साधारण शिक्षा इनमें रुकना चाहिये क्योंकि इंगलैंड का सा मास एजुकेशन इंडिया में भी रहा तो कुछ दिनों में इंगलैंड दब जायगा हिन्दुस्तान तालीम में कदाचित् आगे बढ़ जायगा ; इसकी अच्छी तरह जांच और परख हो गई है कि हिन्दुस्तान के जल वायु में मस्तिष्क का मान्द्य हुई नहीं; बरन यहाँ के लोगों की दिमागी ताकत पृथ्वी के और भूभाग से बहुत अधिक तीव्र है—यही सब पूर्वापर विचार स्कूल की तथा इमतिहानों की फीस दो गुनी तिगुनी कर दी गई; शिक्षा विभाग की किताबों का दाम चौगुना बढ़ा दिया गया; सिवा इसके क्रिकेट फीस बात २ में जुरमाना पंखा फीस आदि इतना बोझा छोड़ दिया गया जिसका खरचा उठाना औसत दरजे की आमदनी वाले को बड़ा कर्रा हो गया और यह सब इस लिये है जिस में साधारण शिक्षा की जड़ सब तरह पर कटी रहे केवल धनी संपन्न जो खाने पीने से सब भांति सुचित हैं उन्हीं के लिये शिक्षा का द्वार खुला बचरहा जो अभागे पढ़तेही नहीं–यह इंगलैंड नहीं है इस देश का अभाग्य कुछ ऐसा ही है कि यहां अभी तक सर्व साधारण आम लोगों के मन में यही धंसा है कि विद्या विद्योपार्जन के लिये नहीं है बरन बिद्या धन कमाने के लिये पढ़ी

जाती है–सो धन की जिन्में कमी न हो वे क्यों अपने सुख और आराम में खलल छोड़ विद्योपार्जन के लिये सिर पचावें–रहे साधारण लोगसो तालीम में फीस आदि का खर्चा बढ़ जाने से उत्तम शिक्षा की कौन कहे औसत दरजे की तालीम से भी महरूम रहे–शिक्षा केवल इतनी महंगी कर दी गई सो नहीं वरन इतने २ सख़ क़ाइदे और सरक्युलर गढ़ दिये और बराबर गढ़ते जाते हैं जिस्का यही प्रयोजन कदाचित् हो कि सब लोग न पढ़ैं–इस समय की पालिसी की अपेक्षा हम लार्ड रिपो महोदय को धन्यवाद देते हैं जिन्हों ने स्कूल की फीस घटाय सबों के लिये तालीम का दरवाज़ा खोल दिया था; किन्तु उन के उपरान्त ही शिक्षा का खर्चा बराबर बरसाती नदी की बाढ समान बढ़ता ही गया और अब तो यह इस दशा को पहुंचा हुआ है जिस्से यही प्रगट होता है कि हमारी तालीम की ओर से हमारे प्रभुवरों को सर्वथा अनुत्साह है–लाचारी हम तो वशम्वद पराधीन हैं जैसे रक्खो गे वैसे ही रहें गे सिवाय प्रार्थना करने के यह भी नहीं कह सक्ते कि तुम अनुचित कर रहे हो–

एग्रिकलचरल (कृषि सम्बन्धी) बैंक ।

सरकार कृषि सम्बन्धी बैंक का एक नया महकमा कायम कर सुनते हैं किसानों को कम सूद पर रुपया खेती करने के लिये उधार देगी जिस्में ज़मीदारों के क़र्ज़ के बोझ से हलके रह खेतिहर उजड़ जाने से बचे रहें–अस्तु यदि यह है तो सरकार का खेतिहरों पर छोह का होना प्रशंसा के योग्य है प्रजा वात्सल्य में हमारे यहां के पुराने राज धर्म का यह एक उदाहरण है–किन्तु हमारे पापी मन में कुछ ऐसा ही चुभ रहा है कि यह छोह निस्स्वार्थ नहीं है इसमें अवश्य कुछ न कुछ दाल में काला है–जितने तरह के रोज़गार और कारबार कोई नहीं बचे थे जिसे गवर्नमेंट ने अपने हाथ में न कर लिया हो जो दो एक कोई बच रहे थे उस के लिये कानून इतने सख़ गढ़ दिये हैं कि लिटिगेशन के लिस्ट के भीतर वे भी आ गये—एक खेती अब तक बच रही है जो शुद्ध प्रजा के जीवन की उपाय है उस में भी हाथ डालने का यह बैंक एक द्वार होता है—एक ओर टिनैंसी बिल दूसरी ओर इस बैंक ने ज़मीदारों को

तों अब किसी कामही का न रक्खा—फिर माना कि खेती के लिये बैंक रुपया उधार देगी तो घर गृहस्थी के और सब काम ब्याह शादी इन का कैसे चलेगा क्योंकि अब महाजन तो इन्हें और रुपया उधार देहीगा नहीं—माना कि ज़मीदार अपने असामियों पर अत्याचार करता है कर्ज़ दे सूद दर सूद चढ़ाय उन का खेत नीलाम करा लेता है फिर भी जो हमदरदी ज़मीदार और असामियों में रहती है वह उदाहरण के योग्य है; उजड़ते हुये असामियों को अन्त में सहारा भी वही ज़मीदारही देता है—माना कि ज़मीदार असामियों का सर्वस्व अपहरण कर लेता है फिर भी प्रजा का धन प्रजाही के बीच रहा किसी तीसरे के पास तो न गया—जो कहो इसमें आराम और आसानी है तो हिन्दुस्तान इसी आराम और आसानीही को खोजते २ उजड़ गया अब कहां तक इसे आराम और आशाइस मिलती रहैगी—रेल इत्यादि से आशाइसही तो हमें मिली पर यहां के कितने लोगों का रोज़गार बन्द हो गया हज़ारों मनुष्य जो पहले राज रजते थे अब भूखो मर रहे हैं—ऐसाही मनी आरडर के चलने से कितनी आशाइस हो गई पर हुंडी पुरज़ा के रोज़गार वालों को कितनी हानि पहुंची; जो रुपया मनीआरडर का अब गवर्नमेंट के घर जाता है वही इसके पहले प्रजा के बीच रहता था—ऐसा ही इसमें भी होगा देहाती खेतिहर जो इस पालिसी को नहीं समझे कम सूद पर रुपया मिलते देख सब के सब एक बारगी टूटैंगे पर पीछे क्रमशः अपना सब खेत तथा जायदाद इसी बैंक के अर्पण कर बैठेंगे—अभी तो एक ज़मीदार मात्र का अत्याचार किसानों को सहना पड़ता है इस बेंकिंग सिसटेम के जारी होने पर तो न जानिये कितने इस के कर्मचारियों का उन्हे सहना पड़ेगा अस्तु अब तो यह जारी ही होता है देखैं इसका क्या परिणाम हो—

देश सुधार का विचार

आर्य जनन सों विनय यह करिये कछू विचार ।
जासों अपने देश को सम्भव होय सुधार ॥

उत्तर पश्चिम प्रांत है निर्बल देश हमार ।
जहां अधिक अबहीं छयौ घनौ कुमति अंधियार ॥
बंगालय, महाराष्ट्र अरु गुर्जर अरु पंजाब ।
इन में मूरखतादि को इतना नहीं प्रभाव ॥
इन देशन के लोग सब पंडित विद्यावान ।
रहत सदा तत्पर सुदृढ़ निज हित वृद्धि विधान ॥
करत नित्य उपदेश सुभ सिखवत सुन्दर नीति ।
भरत देस सौभाग्य सों मेटत सकल कुरीति ॥
अपनेही शास्त्रन विषै निरखत लाभ अनेक ।
जिन कौ दृढ़ अनुगमन करि सुख पावत प्रत्येक ॥
योरप की विद्या विविध विपुल आर्ट सायेंस ।
जिन्ह पढ़ि पढ़ि रुचि सों कहत छिन छिन अधिक प्रसंस ॥
करि करि पुनि अनुवाद बहु योरप विद्या ग्रन्थ ।
तिन्हें प्रचारत देश में यह उन्नति का पन्थ ॥
बाल बिवाह कुरीति सों होति न कितनी हानि ।
तऊ ताहि छांड़त नहीं बुरी परी यह बानि ॥
उत्तर पश्चिम शिष्ट जन विद्या भूषित होय ।
सोचत नाहिं अपनौ भलौ रहे नींद में सोय ॥
पांच बरस की बालिका सात बरस कौ बाल ।
ब्याह करावत दुहुन कौ मानत ताहि सुचाल ॥
लड़की कछु जानत नहीं लड़का निपट अजान ।
ब्याह नाम का वस्तु कौ करियत क्यों यह ठान ॥
माता हू निकसी नहीं दांत न बदले दुग्ध ।

सपत्नीकैं लड़का भयो कन्या पति युत मुग्ध ॥
होत काल बश नित्य नित ब्याहे बाल अनन्त ।
कन्या विधवा होत हैं रीति न तऊ तजन्त ॥
अब विधवा जो ह्वै गयीं करि न सकति पुनि ब्याह ।
या अनर्थ के उदधि की है कहुं दीसत थाह ॥
मदन बेग बाधा प्रबल सकल जगत बिख्यात ।
सो मूरख नारीन सों सही कौन विधि जात ॥
बड़े बड़े पंडित पुरुष ऋषि मुनि परम बिरक्त ।
सहि न सकत जो बेदना होत अधर्म अशक्त ॥
ऐसे मन्मथ बान कों सहि सकि हैं तिय लोग ।
तिहूं काल सम्भव नहीं करि हैं पाप प्रयोग ॥
ऐसी अबला सैकरन पतित होत हैं नित्य ।
नाम डुबावत बाप कौ करि करि कर्म अकृत्य ॥
गर्भ गिरावत सैकरन करत बाल बध पाप ।
अपनौ औ मा बाप कौ नाम बिगारत आप ॥
सूक्षम रीति विचारिये इन पापन को हेतु ।
भयौ प्रथम मा बाप के सिर कलंक कौ केतु ॥
ऐसी दुष्ट कुचाल जहं तहां कहा कल्यान ।
तहां न ईश्वर कोपि हैं तो किहि अन्य स्थान ॥
बिधवा बारी बैस में जितनी अबला होत ।
तिन को पुनि हूं ब्याहिबो परम धर्म को सोत ॥
यह अवश्य कर्तव्य है भारत भूमि मझार ।
विना किये या कर्म के सहिहो दुःख अपार ॥

स्त्री शिक्षा कौ विषय पुनि लीजे हृदय विचार।
बड़ो लाभ यासों सदा दीजे याहि प्रचार॥
किञ्चित मात्र बिलम्ब हू करिये नाहिं इहि काज।
दीजे शीघ्र मिटाय तम रखि भारत की लाज॥
पुरा काल अबला भई पंडित परम प्रबीन।
याही भारत देस में सो सब विधि अब हीन॥
बंग देश के बीच में कितिक कुमारी आज।
पढ़ि पढ़ि विद्या विमल बहु सोहति नारि समाज॥
भारत बनिता वृन्द में रमा बाई नाम।
रही प्रबल बिद्यावती कला कुशल अभिराम॥
जाकी विद्या चातुरी छाई सब भूगोल।
भारत के इन दिनन में रही सुरत्न अमोल॥
सोतिय भारत भाग्य बस गयी देस कों त्याग।
भई विबस इन्द्रीन के तजि निज कुल अनुराग॥
सो प्रिय बान्धव सुजन गन सुनौ बात दै कान।
सिखवो निज निज गृहन में बाल युवा अबलान॥
थापो शाला पढ़न हित जोरौ पाठक नीक।
तन मन सों सोधौ सुघर मर्यादा कुल लीक॥
अपने शुभ कारज बिषैं त्यागौ लोभ निदान।
थोरौ थोरौ देहु जो जुरिहै द्रब्य महान॥
या धन को सज्जन सबै लहिहौ बड़ौ प्रसाद।
सात पांच के यत्न सों नसि है घोर विषाद॥
हमरे घर की तीयवर रहैं सदा अज्ञान।

बालक हू तिनके रहैं मूरख मूढ़ निदान ॥
जो घर घर बनिता सबै शिक्षित ह्वै हैं आप।
निज पुत्रन को जन्मतें बाढ़ि है बुद्धि प्रताप ॥
ऐसी ऐसी बात लखि तिय शिक्षा मन देहु।
इह लोक पर लोक में जस कीरति सब लेहु ॥
ह्वै है परम प्रसन्न प्रभु तुम सों श्री जगदीश।
छै है मंगल देश में बाढ़ि हैं नृप अवनीश ॥
बोलौ जय इहि समय सब ब्रिटिश राज्य की टेरि।
ता पाछे जय कुरजनहू ऊंचे सुरसों फेरि ॥
अब इहि कथना अंत में विनय और इक मोर।
देखौ दृष्टि विवेक सों अपनी भाषा ओर ॥
हौ तुम कौन यथार्थ में भाषा कौन तुम्हार।
पुनि किहि भाषा कौ यहां दीसत अधिक प्रचार ॥
है हमरी हिन्दी गिरा उर्दू हमरी नाहिं।
पदि तौहू किमि तासु को आदर अधिक लखाहि ॥
राज कचहरिन में अहै उर्दू केरि प्रचार।
ताही को सन्मान है सब में सबै प्रकार ॥
या उर्दू कों ग्राम्य जन समझत नेकहु नाय।
तासौं होत अनिष्ट बहु जिन्हें सहत दुख पाय ॥
सुघर नागरी वरन अति देत यथारथ बात।
उर्दू कछु को कछु करति जासों जी अकुलात ॥
हानि असंख्यन होत है नित उर्दू करतूत।
श्री मेगडानेल जानि यह कियो बात अनुभूत ॥

जे निज बात न छाड़हीं धीरज ढाढ़स बांधि ।
संसै यामें है नहीं लेवें कारज साधि ॥
यह मेरी इतनी विनै सुनि के सुजन समाज ।
भूल चूक वा कटु वचन छमियौ छमा जहाज ॥

पं० श्रीधर पाठक

मधुप

एक क्षुद्र प्रस्ताव ।

मधुप तेरे लिये सब संसार भर ऐसी रमणीक और मन लुभाने वाली बाटिका है कि इस्में घूम २ तू हर तरह के मकरन्द का स्वाद लेता हुआ स्वछन्द विहार कर सक्ता है—पर देख खबरदार सावधानी रखना केवल मकरन्द के पान से काम रखना तुझे क्या पड़ी है कि किसी तरह की छेड़छाड़ कर या अपनी राय ज़ाहिर कर कि इस बगीचे की फलानी क्यारी के फूल भले या बुरे हैं—हां वहां तुझे बहुत से कटीले वृक्ष भी मिलेंगे जहां तुझे सर्वांग कंटक बिद्ध हो जाने की भी संभावना है—तो तुझे क्या प्रयोजन कि उन कटीले पेड़ों से अधिक पिष्ट पिष्ट कर अपने को दुखी बनावे—अच्छा तो अब तू जा तेरा सब भांत मंगल और स्वस्ति हो—"तव वर्त्मनि वर्ततां शिवं पुनरस्तु त्वरितं समागमः" अपने काम में भर पूर चालाक और सयाना यह मधुप बिदा हो पहले पहल इस वाटिका की एक ऐसी क्यारी में जा पड़ा जहां के फूलों की मीठी और तीखी सुबास इस्के मन को महीनों और बर्सों से लुभा रही थी—क्यारी क्या बल्कि यह एक पूरा गाटे का गाटा था और इस मनोहर बाटिका के बीचो बीच में था—कहने को तो यह एक ही गाटा था पर उस में कई एक जुदी २ क्यारियां कर दी गई थीं—और इन में ऐसे २ गुल खिले हुये थे जिन की सुबास मधुप को महीनों बिलमा रखने को काफी थी—

मधुप बड़ी देर तक इसी असमंजस में पड़ा हुआ था कि पहले इन में किस ओर झुकों और किस अनोखे मकरन्द का पान करूं-थोड़ा संकल्प विकल्प और ऊहा पोह के उपरान्त यह एक ओर झुक पड़ा और देखा तो वहां के मदमाते गुलाब केवड़े निराले ढंग पर महर २ करते हुये अपने कलुषित चरित्र की छिपी सी छिपी गन्धि से उस मधुप को महीनों के लिये अपना पाहुना बनाने को प्रस्तुत हैं-उधर वहां की केतकी सेवती मालती चमेली अलग ही हवा में झोंके लेती इशारे से उसे निमंत्रित कर रही हैं-मधुप पहले तो बड़े चाव से वहां विराम करता रहा और यही आशा लगाये था कि इन गुलाब केवड़ों की सौरभ का मन मानता स्वाद उसे मिलेगा; किन्तु बहुत ही जल्द इस्से निरास होजाना पड़ा-सच है "सहवासी विजानीयाच्चरितं सहवासिनां" "सोना परखै कसे आदमी परखै बसे" बल्कि इस आशा भंग की उसे असह बेदना सहना पड़ा और यह कहावत याद आई-"ऊंची दूकान के फीके पकवान होते हैं" पछताते हुये भांत २ की कल्पनायें और अनेक तरह के विचार इस्के मन में उठने लगे कि ईश्वर ही रक्षक है जो यही दशा है तो कै दिन इस ऊंची दूकान का ऊंचापन निभ सक्ता है; अस्तु मधुप को तो अपना काम साधने से प्रयोजन था-जैसी उसे शिक्षा मिली थी उसी के अनुसार गुलाब और उस्के परिकरों की लीला का अनुभव करने लगा-उन परिकरगणों में एक उसे वहां देख पड़ा जो उस्तादी, सयानपन, और मक्कारी में अपने साथियों में सबों के कान काटे था-उमर में ४० के उपर डांक गया था पर हुस्न और वज़ेदारी में अपने को १८ वर्ष का गभरू जवान माने हुये था-इसे अपने हुस्न का गरूर कुछ उचित भी मालूम होता था क्योंकि उमर इस्की इतनी धंस गई थी सही पर सिर के बाल कहीं एक भी सुफ़ैद न हुये थे-इस्के गोरे चेहरे पर गुलाल की लाल बिन्दी बहुत ही भली लगती थी-मोटे ओठों पर पान की ललाई विद्रुम की आभा और कुन्द की कलियों से उतार चढावदार दांतों की दोनों पांत मानो मोतियों की दोलड़ियां थीं-चेष्टा और आकार से तो यह कोई ऊंची जाति का मालूम होता पर इस्के गुप्त चारित्र और काम की ओर जब ध्यान गया तो मधुप बड़े सन्देह में आया कि इसे कौन

जाति और किस वर्ण का मानें-जोहो उस गुलाब के तो यह बड़े ही काम का था; बल्कि हाथ की करछुली था; जिस्के बिना एक क्षण भी उसे कल न पड़ती थी और सब काम बन्द रहता था-नाम इस्का पूरन था फुन्नू था-पढ़ा लिखा एक अक्षर न था पर चालाकी से सब विषय में टांग अड़ा देता था-या वहां पढ़ने लिखने का काम ही कौन था "लंका निश्चर निकर निवासा-यहां कहां सज्जन कर बासा" गुलाब को जब कुछ चुहल करना मनज़ूर होता था तब यह आपस की चपत बाज़ी धौल धक्कड़ हाहा ठीठी में विदूषक बन जाता था; ब्यालू या भोजन के समय बावर्ची या वल्लव का काम देता था; चौसर या गंजीफा खेलने में शाक्षात् कंक भट्ट यही बन बैठता था; शाम को हवा खोरी के वक्त कोचवान बन जाता था; कभी कभी को सईसी भी निभा देता था; विहारस्थान खिलवत में घटक बनता था-सच पूछो तो यही इस्का मुख्य काम था भी; पूरन क्या यथोनामत था गुण सब भांत पूर्ण बहुगुना वर्तेभ था "लाओ ऐसा नर पीर बावरची बिहिश्ती खर" कहां तक पूरन की सिफ़त लिखी जाय; प्याले पर प्याला जब गर्दिश करने लगता था तब जाम को लबरेज़ करने वाला भी यही होताथा; शगल जब ओर छोर को पहुंचता था तब उस मुर्दे को घसीट खाट पर पटक देने वाला भी यही होता था-

एक दिन अषाढ़ का महीना आधी रात का समय था शुक्ल पक्ष की सप्तमी या अष्टमी रही होगी मेह बरस कर निकल गये थे बीच २ दो चार बूंदें पड़ती जाती थीं-पर बादल गड़ गड़ा रहे थे आसमान बिलकुल साफ़ नहीं होगया था जिस्से बोध होता था अभी दो एक बड़े ज़ोर की कुज्झटिका और आया चाहती हैं-भाग्य हीन की समृद्धि सदृश अष्टमी का चन्द्रमा अस्त होने पर था-इधर उधर बिखरी श्वेत कृष्ण मेघ माला में सौदामनी क्रोधित कामिनी सी लौक रही थी; सब ओर सन्नाहटा छाया हुआ था केवल नववारि समागम प्रफुल्ल भेक मण्डली नाऊ की बरात के समान सब के सब अलग २ ठाकुर बने हुये टर २ करते कानों की चैलियां उड़ाये डालते थे-इसी समय किसी ने आय कुंडी खटखटाया; पूरन जो दिन के चाहो कहीं रहे रात को

ज़रूर उसे वहां रहना पड़ता था ऊंघता हुआ आया और किवाड़ खोल दिया—यह आदमी जो इस समय आया लम्बे कद का डाढ़ी रखाये था गलमुच्छे थे और गोल टोपी दिये था—अंदाज़ से मुसलमान मालुम होता था; आते ही बाबू गुलाबचन्द्र को बड़े अदब के साथ झुक के सलाम किया—गुलाबचन्द्र मानो इसे परख रहे थे बल्कि इन्तज़ारी करते २ उकता से गये थे बोले शेख जी आप ने तो बड़ी देर की—

शेखजी-हुज़ूर हां देर तो बिलाशक हुई आप जानते हैं एसे २ काम क्या सहज में होजाते हैं-ज़रा देर तो हुई पर चीज़ भी ऐसी है कि हुज़ूर को खातिर खाह पसन्द आवेगी—याने मैं बहुत दिनों से इस काम को कर रहा हूं पर ऐसी चिड़िया कभी मेरे कांपे में नहीं आई—बहुत देर तक काना फुस्की और कह कहे के उपरान्त शेख जी बोले हुज़ूर आप जानते हैं ऐसी कौन सी बात है कि जिसके लिये कोशिश करो और कामयाबी न हो—

गुलाब—हां इस्में क्या शक्क है; इसी लिये तो मैं ने आप के सिपुर्द इसे किया; जैसी रूह वैसे फिरिश्ते होना चाहिये—अच्छा तो अब देर क्यों (पूरन से) पूरन आरास्त है न—

पूरन—जी हां आप का हुक्म पाते ही मैं ने सब साज रक्खा—

गुलाब—शाबास अच्छा तो इसका खातिरखाह इनाम पावेगा—

मधुप जो चुप चाप मौन साधे यह सब लीला देखता रहा चित्त में बहुत ही बहुत घिनाना और कहने लगा मैं कहां ऐसे ठौर आ फंसा अब कैसे छुटकारा पाऊं "अग्रग्रासन ग्रासन समये मक्षिका सन्निपातः" संसार के कौतुक रूप मधु के पान की लालसा से मैं निकला था और इच्छा थी विचर २ इस अनोखी वाटिका में जिसे संसार कहते हैं जहां अच्छे से अच्छा मधु मिले उसे पिऊं पर यहां इस गाटे में मुझे ऐसा विषाक्त पुष्परस पीने को मिला कि कलेजा झौंस गया; आशालता बिलकुल कुम्हला गई; जो देखने में बड़े भव्याकृति और चेष्टा से जिन के शिष्टता, सभ्यता, बड़प्पन, बरस रहा है उन के गुप्त आचरण इतने महा मलिन और दुर्गन्धि पुरित हैं-तो ओछे छिछोरे क्षुद्र जनों का क्या ठिकाना (आकाशवाणी) मधुप इतने हीसे उक्ता गया अभी तो

तुझे बड़ी २ लीलायें देखाना है मत घबड़ा उन से भी तेरी भेंट होगी जो तुझे वास्तव में अपने सुचरितामोद से तेरा चित प्रमुदित कर देंगे; चुप चाप मौन साध जैसा रस तुझे पीने को मिलै पी ले—

पाठक आप जानते हो मधुप प्रत्येक फूलों से लै थोड़ा २ जमा करता रहता है—आज का यह क्षुद्र प्रस्ताव मधुप के चिरकाल का संग्रह है इस्से जो आप को कुछ भी चित्त विनोद हुआ तो इसी का शेष फिर कभी आप के करण गोचर करावेंगे—तब तक हमारे मधुप को और संचित कर रखने का पुनः अवकाश भी मिल जायगा—

समालोचक की आलोचना

स्वयमपि भूरिछिद्रश्चापलमपि सर्वतोमुखं तन्वन् ।
नितउस्तुषस्य पिशुनो दोषस्य विवेचने ऽधिकृतः ॥

१३ सिम्बर को बम्बई के वेंकटेश्वर समाचार में "भाग्य का फेर" की समालोचना में पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदीय २७ बांसतल्लास्ट्रीट कलकत्ता ने न जानिये कब का संचित दुर्भाव प्रगट कर दिखाया और समालोचना करते समय वहुत सी बातें असंगत लिख गये हैं:—

१ ला दोष इसका अनन्तचन्द्र का अपनी कन्या पर मोहित होना बतलाया है "जो बात हिन्दुओं के लिये एक दम नई और अनूठी है" और "अंगरेज़ों का हृदय कठोर है" अब हम चतुर्वेदीय जीसे पूछते हैं कि हिन्दुओं के लिये यह बुराई की बात नई और अनूठी कब से हुई? क्या हिन्दुओं में चोर बदमाश व विषयी कभी हुयेही नहीं या न होते हैं? यह तो एक मामूली उपन्यास है मालूम होता है ऋषि प्रणीत पुराण में हिन्दुओं के सृष्टि रचयिता पितामह ब्रह्मा की करतूत (चाहो यह निरी पुराणी की गढ़न्त हो या और ही मतलब से लिखी गई हो) चतुर्वेदीय जी को नहीं मालूम—जो देवताओं में ऐसी २ बातें होती आईं तो मनुष्यों में हुई यह कौन आश्चर्य की बात है और फिर जो असंगत भूल इस "भाग्य के फेर" में हुई उसी असंगत भूल को आपने भी तो नहीं छोड़ा—आपने अपने "संसार चक्र" में जयकाली

का अपने पुत्र पर मोहित होना क्या नहीं लिखा ? अंगरेज़ों का हृदय कठोर और हिन्दुओं का हृदय आर्द्र चतुर्वेदीय जी ने कब से ठहराया—मालूम होता है चतुर्वेदीय जी समालोचना करती समय कुछ सामुद्रिक का अभ्यास कर लिया था—अंगरेज़ों में यह सब बुराई की बातें निः-सन्देह हैं ; पर हिन्दू लोग भी इस से बरी नहीं हैं, बल्कि हम यही कहेंगे कि आज कल के बहुत से हिन्दुओं का तो पिशाच से कहीं अधिक नम्बर बढ़ा हुआ है जिनकी सूरत देखते मन में घृणा उपजती हैं ; यह पेरिक्लीज़ वर्ण शंकर किस तरह से हुआ यह मैं नहीं समझ सक्ता ; केवल अनन्त चन्द्र की करतूतही से वह वर्णशंकर हुआ तो यह बात सिवाय चतुर्वेदीय जी के कदाचित् ही कोई स्वीकार करे—

चतुर्वेदीय महाशय लिखते हैं "राधाकृष्ण दास कृत पेरिक्लीज़ टंडन कृत अनुवाद से कहीं अच्छा है" पर पं० महावीर प्रसाद द्विवेदीय झांसी निवासी ने जो आज कल समालोचकों में एक स्तम्भ माने जाते हैं अपने पत्र में स्पष्ट २ यही लिखा है कि "पेरिक्लीज़ सरस्वती ने भी छापा है और आपने भी पर आप का पेरिक्लीज़ सरस्वती से कहीं बढ़ कर है"—अब हम नहीं कह सक्ते किसका कथन मानना चाहिय; द्विवेदीय जीका या नवीन समालोचक चतुर्वेदीय जीका ; आपने भाषा के दोष में टंडन कृत भाषा को भद्दी बतलाया है, हम नहीं कह सकते कि टण्डन कृत भाषा में क्या भद्दापन आ गया है—उस को मक्षिका स्थाने मक्षिका कर देते जैसा आपने अपने संसार चक्र में किया है तो संभव है उस में भद्दापन न आता—फिर आप लिखते हैं " व्याकरण की अशुद्धियों के अतिरिक्त मुहावरे की अनन्त अशुद्धियां हैं" चतुर्वेदीय जी को केवल इतनाही लिख सन्तोष करना अच्छा नहीं आप को उचित था कि उन अशुद्धियों को लिख कुछ अपनी बुद्धि लड़ाय उस का शोधन करते—पर हां यदि छापेही की अशुद्धियों को व्याकरण की अशुद्धि माना होतो लाचारी है—अन्त में अपनी राय का साराँश लिख कर चतुर्वेदीय जीने अपनी लेखनी को यों विश्राम दिया "यदि टण्डन साहब लेखक होने के बदले कुछ दिन और पाठक बने रहते तो अच्छा होता" निस्सन्देह मैं टण्डन साहब को बहुतही बहुत जानता हूं पर

चतुर्वेदीय जीसे भीमैं निपट अच्छा नहीं हूं—टण्डन जी चतुर्वेदीय जीसे बड़प्पन विद्या बुद्धि में बढ़े नहीं तो किसी अंश में उन से कम भी नहीं हैं ; हां कदाचित् टण्डन साहिब ज़ाहिरदारी में कम होंगे ; इन्होंने अलग कोई ग्रन्थ लिखकर अपनी फोटो नहीं दिया—कदाचित् इन को अभी नेकटाई वा कालर का चस्का नहीं पड़ा मालूम होता है टण्डन साहब कुछ कुरूप हैं—और यह हम नहीं समझे कि चतुर्वेदीय जी का इस कथन से क्या तात्पर्य है क्या इन्होंने लेखक वा पाठक को दो वस्तु मान रक्खा है ? जो एक दूसरे के साथ नहीं रहती ; और क्या जब तक मनुष्य पाठक रहै लेखनी को हांथ में न ले ? और जब लिखना आरम्भ करै तो भूल कर भी कोई पुस्तक किसी दूसरे के कलम की कारीगरी देखने के लिये न ले ? मेरी समझ में तो पढ़ना और लिखना दोनों साथही साथ चलते हैं और यही देखा गया है कि सब से बड़े लेखक प्रायः सब से बड़े पढने वाले भी होते हैं ; इसका उदाहरण चतुर्वेदीय जी स्वयं यदि इतिहास के पाठक रहे हों तो जानते होंगे—

महादेव प्रसाद



हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २४ सं० ८ । ६ } प्रयाग { अगस्त सितम्बर सन् १६०१ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥=)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द की जिल्द मै पोस्टेज १=)

—:००:—

नमूने की कापी =)॥

१-११-०१



हिन्दीप्रदीप

जि० २४ सं ८-८ } प्रयाग { अगस्त सितंबर

क्षमा प्रार्थना ।

कहावत है "एक तो तितलौकी दूजे चढ़ी नीम" एक तो हम योंही समय से न उपस्थित होने के लिये विख्यात हैं इसी लिये सुलेखकी के समस्त गुण सम्पन्न होने पर भी रसिक मण्डली से अनाद्रित और निकासे हुये हैं; ऐसे ही कोई जिन्हे चटकीला लेख पढ़ने का नसूर पड़ गया है हमे भी पूछने का मन करते हैं–दूसरे अब इस भयंकर विकराल काल का कहना ही क्या कि नगर का नगर उजड़ गया जिन्हे जहां शरण मिला महामारी के भय से जा छिपे–इसी भगोड़ में हम भी छिन्न भिन्न हो बाल बच्चों की खैर मनाते हुए महीनो तक न जानिये कहां २ घूमते फिरे–और २ स्थानों से मुह मोड़ प्लेग ने अपनी बहादुरी इस बर्ष प्रयाग ही पर दिखलाने का मन में ठान रक्खा है ऐशी दशा में हम अपने पढ़ने वालों से सविनय क्षमा की प्रार्थना मांगते हैं और यही चाहते हैं कि हमारे पतित पावन पाठक जन हम ऐसे पतितों का अपराध क्षमा करें और बांह गहे की लाज निवाहने

के ढंग पर हमें अपनियाये रहें—जो बड़े लोग हैं वे अपने आश्रित के गुण दोष का बिचार नहीं रखते—कहा भी है

"दोषाकरोपि कुटिलोपि कलंकितोपि मित्रावसानसमये विहतो दयोपि। चन्द्रस्तथापि हरवल्लभतामुपैति नैवाश्रितेषु गुणदोषविचारणा स्यात्" ॥

धत्तेरी उस साइत की जिस्में हमारा प्रदुर्भाव हुआ है कि कई महीनों तक गुम सुम पड़े रहते हैं सब लोग यही समझ लेते हैं कि बस अब यह बुझा अब इसका नाम निसान भी न बाकी बचा—रहा रहा फिर एक बार ज़ोर शोर से टिम टिमा उठा २४ बर्ष इसी भांत झेल डाला; बेहया ज़िन्दगी इसी को कहेंगे—धिक् ऐसे दीर्घ जीवन को "काकोपि जीवति चिराय बलिं च भुंक्ते—

ग्राम्य जीवन ।

RURAL LIFE.

मनुष्य के लिये ग्राम्य जीवन मानो प्रकृति देवी की शुद्ध प्राकृतिक आवस्था का आदर्श स्वरूप है—अर्थात् Nature प्रकृति के साथ Art बनावट ने जब तक बिलकुल छेड़ छाड़ नहीं किया उस दशा में प्रकृति देवी का कैसा स्वरूप रहता है ग्राम्य जीवन में यह हमारे सामने आईना सा रख दिया गया है—अपने लेखों में हम इसे कई बार सिद्ध कर चुके हैं कि हमारे प्राचीन आर्य प्रकृति के बड़े भक्त थे; वे प्रकृति के स्वाभाविक रूप को अपनी हिकमत अमली के द्वारा कुरूप या उसे बदलना नहीं चाहते थे—इस आधुनिक पश्चिमी सभ्यता से उनकी पुरानी सभ्यता बिलकुल निराले ढंग की थी—यह हम कभी न मानेंगे कि यूरोप के बड़े नामी विद्वान् दार्शनिक और वैज्ञानिकों की भांत भाफ और बिजली तथा अनेक रसायनिक परिवर्तन में क्या २ शक्तियां हैं; जिन्हें काम में लाय मिट्टी का पुतला आदमी कहां तक तरक्की कर सक्ता है; जिस तरक्की को साधारण बुद्धि वाले

हम लोग दैवी शक्ति या दैवी घटना कहेंगे उन पुराने आर्यों को न सूझी हो-किन्तु उन्होंने जान बूझ इसे बरकाया कि ऐसा होने से हमारी माननीय प्रकृति Polluted दूषित हो प्रत्यवाय में जितना उस प्राकृतिक परिवर्तन से लाभ उठाने की संभावना हम रखते हैं उस्से दो चन्द हमारी हानि प्रत्यक्ष है-हमारी मन्द बुद्धि में कुछ ऐसाही स्थिर हो गया है कि यह प्लेग, हैज़ा, चेचक आदि का भयंकर उपद्रव जो प्रति बर्ष किसी न किसी रूप में नदी के प्रबाह के समान फैल देश के देश को उजाड़ डालता है; दूसरे जल बायु की स्वच्छता और शुद्धता संकुचित होती जाती है; यह सब उसी प्रकृति के छेड़ने का परिणाम है-बड़े २ शहरों की घनी बस्ती के दूषित जल बायु का बुरा असर जो भांत २ के रोग पैदा करने का मानो चश्मा या प्रसव भूमि है हमारे दूढ़ांग दिहाती उस्से सर्वथा बचे रहते हैं-म्यूनिसिपालिटी की असह्य बेदना कैसे सहना होता है कभी उन्होंने जानाही नहीं-विष या स्वाद में पगे हुये ऐयाशी करते २ पीले आम से ज़र्द; जिन के तन की तनदुरुस्ती हरियाली को तरुनी बार विलासिनी हरिनी बन चर गई, ऐसे इन नगर निवासियों को हमारी ग्रामीण मण्डली सुचित्त बैठ अपनी घरेलू बात चीत में जीट उड़ाते हुये कह कहे मार रही थी कि अचानक कोई शहर का रहने वाला कपट नाटक की प्रस्तावना सदृश शहरीयत के बर्ताव से ऊबा हुआ वहां पहुंच बोला-"क्यों भइया आप लोगों ने कौन सी ऐसी तपस्या किस पुण्य भूमि में कर रक्खा है जो विषय लम्पट, मदोन्मत्त, नगर के नामी धनियों का मुख तुम्हे नहीं देखना पड़ता ; न ज़ाहिरदारी और गर्व में सने उन के बचन तुम्हे सुनना पड़ता है; न हमारे समान तुम उनकी प्रत्याशा में धौड़ा करते हो; शान्त चित्त दिन भर मेहनत करने के उपरान्त समय से जो कुछ मिला भोजन कर टांग फैलाय सुख की नींद सोये न ऊधो के देने न माधो के लेने, तनज़ेब आबरवां से तुम्हे कोई सरोकार नहीं; गजी गाढ़ा जो कुछ अपने देश में निज की मेहनत से तैयार कर सके उसे जब तुम पहनते हो तब विलाइत के नये फेशन के चटकीले कपड़े तुम्हे फीके जंचते हैं-ऐसाही लीपी पोती झक्क; साफ और सुथरी ; निर्मल

स्वच्छ बायु का निर्गम जहां कहीं से प्रतिहत नही है; फूस की छाई तुम्हारी झोपड़ी तुम्हे वह सुख देती है जो हवा से बात करते अभ्रंलिह गगनस्पृक् किन्तु शहर की गन्दी मैली दुर्वायु दूषित अमीरों के सतखण्डे महलों में दुर्लभ है-शहर की गन्दी गलियों की दुर्गन्धि तुम्हारे नासारन्ध्र में काहे को कभी प्रवेश पाया होगा-भाई तुम धन्य हो-अनेक चिन्ता ज़र्जरित बड़े से बड़े प्रभुवरों और राजा महाराजों को कीमती दस्तरखान और उमदा लज़ीज ज़ियाफतों में कदाचित् वह स्वाद् न मिलता होगा जो तुम्हे टटके ताज़े घी खेत के तुर्त के कटे ज्वार बाजरे-जवा और बेरें की ताज़ी रोटी में मिलता है-कहा भी है:-

"तरुणं सर्शपशाको नवनीत घृतं पिच्छलानि दधीनि ।
अल्पव्ययेन सुन्दरि ग्रामीण जनो मिष्ट मश्नाति" ॥

हरा हरा सरसों का साग तुर्त का मथा मक्खन; हींग और ज़ीरा में बघारी हुई भैंस की पनीली दही से जैसा गांव के रहने वालों को मधुर स्वादिष्ट भोजन सब भांत सुलभ है वैसा नगर के धनियों को भी बहुत सा खर्च करने पर मयस्सर नहीं है—इससे भैया तुम्हारा जीवन सफल है; संसार का सच्चा सुख तुम्हारेही बाट में आ पड़ा है-नई सभ्यता का नाम तक आपने न सुना होगा? न नई सभ्यता का विपाक प्लेग और हैज़ा के कारन खाना बदोशों की भाँत घर छोड़ दर २ तुम घूमते फिरे होगे? यमराज सहोदर कोट पेंट धारी डाक्टरों का मुख भी आप को कभी देखना नहीं पड़ता—मेलीरिया ज्वर जनित पीड़ा निवारणार्थ कुनइन कभी तुम्हे नहीं ढूढ़ना पड़ता—न हर महीने दवा खाने की बिल आप को अदा करना पड़ता है-टटके स्वच्छ खाद्य वा पेय पदार्थों का भोग पहले आप लगा लेते हो तब महीनों के उपरान्त नीरस पदार्थ हमें मिलते हैं-हे अग्ररस भोक्ता तुम्हे नमस्कार है—गौरांग महा प्रभुओं का कभी साल भर में भी एक बार तुम्हे मुख नहीं देखना पड़ता हम नित्य उन का चपेटा घात सहा करते हैं-हे अन्नपूर्णा देबी के अनन्य भक्त हे शान्ति के सहकारी

जन? हे स्वास्थ्य के सहोदर? आप न होते ता महामारी के विकराल अजगर के मुख से हमे कौन छुड़ा लाता-तुम्हारी ग्राम्य युवतियों की स्वाभाविक लज्जा नागरिक ललनाओं के बनावटी परदों में कहीं ढूढ़ने पर मिलै या न मिलै-तुम्हारी समग्र सम्पत्ति का सार भूत पदार्थ गोधन अर्थात् गाय, बैल, भैंस, छेरी, भेड़ी इत्यादि है-गोधन संपन्न किसान छोटे मोटे ज़मीदारों को भी कुछ माल नहीं समझता-कवि कुल मुकुट भट्टि ने लिखा भी है-

"बियोगदुःखानुभवानभिज्ञैः काले नृपाशं विहितं दद्द्भिः अहार्यशोभारहितैरमायैरैक्षिष्ट पुंभिः प्रचितान्सगोष्ठान् ॥ स्त्री भूषणं चेष्टितमप्रगल्भं चारूण्यवक्राण्यभिवीक्षितानि । ऋजूं-श्चविश्वासकृतः स्वभावान् गोपाङ्गनानां मुमुदे विलोक्य ॥ विवृत्तपार्श्वं रुचिरांगहारं समुद्वहचारुनितम्बविम्बम् । आमन्द्र मन्थध्वनिदत्ततालं गोपाङ्गनानृत्यमनन्दयत्तम् ॥

श्री रामचन्द्र विश्वामित्र के साथ धनुष यज्ञ में जाते समय मार्ग में जो ग्राम देखे हैं उन्हीं के बर्णन में ये श्लोक हैं—भारवि और माघ ने कहीं २ ग्राम्य शोभा का बर्णन किया है पर भट्टि का यह बर्णन सर्वोत्कृष्ट और बहुतही प्राकृतिक है-

---

छोटे लाट श्री मान् लाटूस साहब का प्रजावात्सल्य ।

महामारी के इस भयंकर उपद्रव में हमारे छोटे लाट साहब इलाहाबाद के उन मुहल्लों में जहां प्लेग का प्रचण्ड भय छाया हुआ था जा जा कर लोगों को आश्वासन देते फिरे हैं और सफ़ाई आदि के प्रबन्ध की गड़ बड़ी पाय चिरकाल की नींद में सोते हुये म्युनिसिपल कमिशनरों को जागने के लिये सचेत करते रहे हैं-लाट साहब को इसका अनेक धन्यबाद है जिन की इस प्रकार की सहानुभूति से प्रजा अत्यन्त प्रसन्न हो उन्हे असीस रही है-निस्सन्देह यह बात बिल्कुल

नई है किसी हाकिम ने ऐसा अब तक नहीं किया कि नरक पुर की किबलेगाह हिन्दुस्तानी बस्ती के एक २ कोने अँतरे में इस तरह घूमता फिरा हो-इससे दूसरा बड़ा उपकार यह हुआ कि म्युनिसिपलकमिश-नरों के कान खड़े होगये जिन के दल में कई एक ऐसे भी हैं जो अख-ण्ड पुण्य और अक्षय यश की संपादन करने वाली अपने मुल्की भाइ-यों की इस साधारण सेवा को अपना गौरव और प्रतिष्ठा बढ़ाने का एक बहाना समझ एलेक्शन के समय घर २ घूम वोट पाने के लिये लोगों को तंग किया करते हैं-पीछे अपना मतलब गंठ जाने पर उन्ही बेचारों की हानि करने में चूकते नहीं-लाट साहब को उचित है ऐसों की कुछ अभी और खबर लें और ऐसों को इस ओहदे से खारिज करें-जिस्में म्युनिसिपेलटी में वेही लोग रहें जो प्रजा की सेवा शुद्ध भाव से करने का इरादा किये हों-उक्त लाट साहब का खैरात की ओर बड़ा ख्याल रहता है किसी गरीब दुखिया को देख जिसे ये सच सच असमर्थ समझ लेते हैं उसकी जहां तक हो सक्ता है अपने निज जेब खर्च से मदद् करते हैं-अपने शासन का उत्थान तो इन्हो ने बहुत अ-च्छे ढंग पर उठाया है अन्त तक जो ऐसाही निभ जाय तो मेगडानेल के कड़े किन्तु निष्पक्ष प्रजोपकारी शासन को हम भूल जांयगे-हमे अधिक चिन्ता हाल के लगे हुये हिन्दी के कोमल पौधे है कि वह इन की अनुपेक्षा से कहीं मुरझा न जाय-हाल में काशी नागरी प्रचारणी सभा की ओर से जो अभिनन्दन पत्र दिया गया था और उस्के उत्तर में जो कुछ इन्हो ने कहा उस्से तो यही सिद्ध होता है कि हिन्दी के लिये जितना मेगडानेल साहेब कर गये हैं उतना तो अवश्य ये का-यम रक्खेंगे-उतना भी इस कोमल पौधे के लिये बना रहे और नागरी प्रचार करने का दम भरने वालों की नासमझी और क्षिप्रकारिता का बुरा असर इसपर न पड़े इसी को हम इस समय गनीमत मानते हैं-

"सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्"

सोना।

मैं समझता हूं सोने के सामान दूसरा सुख कदाचित् न होगा भांति २ की आधि व्याधि ग्रसित मनुष्य जन्म में यदि कोई सच्चा सुख

संसार में है तो सोने में है–किन्तु वह सुख तभी मिलता है जब सोने का ठीक २ बर्ताव किया जाय–इस सोने को आप चाहो जिस अर्थ में लीजिये निद्रा या धन बात वही है फर्क सिर्फ इतनाही है कि रात का सोना मन को मन माना मिल सकता है धातु वाला सोना सब के पास उतनेहीं अन्दाज़े से नहीं आता–दूसरे इतने परिश्रम से मिलता है कि दांतों पसीने आते हैं–हम अपने विचार शील पढ़ने वालों से पूछते हैं सोने के इन दो अर्थों में आप किसे अच्छा समझते हैं ? क्यों साहब रात वाला सोना तो अच्छा है ना ? इसलिये कि यह कंगाल या धनी सब को एक सा मयस्सर है–धनी को मखमली कोच पर जो निद्रा आवेगी कंगाल को वही कंकड़ों पर–कहा भी है "निद्रातुराणां नच भूमिशैया" जिस्से सिद्ध होता है कि जो प्रकृति जन्य पदार्थ हैं उस के मुकाबिले कृत्रिम बनावटी की कोई कदर नहीं है ; जैसा मलयाचल की त्रिविध समीरण के आगे खस की टट्टियों से आती हुई थरमेंटीडोट की हवा को कभी आप अच्छा न कहियेगा–किन्तु फिर भी जैसा हम ऊपर कह आये हैं कि सोने के ठीक २ बर्तावही से सब सुख मिल सकते हैं ; इसके ठीक २ बर्ताव में गड़बड़ हुआ कि यही सोना आपका जानी दुशमन हो जायगा और सकार के स्थान में आप को रकारदेश तब सूझने लगेगा ; पर किफाइत और उचित बर्ताव इस का रखिये तो सोना और सुगन्ध वाली कहावत सुघटित होगी—एक सोने वाला जुआरी एक बार बहुत सा रुपया हार गया तो बोला क्या परवाह दूसरे दांव में इसका दूना जीत लूंगा पर दूसरी बार जुआ में जो कुछ पल्ले का था सो भी निकल गया—ऐसाही एक सोने वाला विद्यार्थी बड़ा होने पर बहुधा अपने मित्रों से कहा करता मैं जवानी में सोकर इतनी देर के उठता था कि आज हिसाब लगाता हूं तो ३० बर्ष में २२ हज़ार के लगभग घंटे मैंने बेफाइदे खोये–याद रहे अगर आप रात वाले सोने का वाजिबी बर्ताव करते रहोगे तो धातु वाला सोना आप से आप आमिलैगा–निश्चय जानिये मनुष्य के लिये कोई बस्तु अप्राप्य नहीं है यदि चित्त दे हम उसे लिया चाहें—सोना वह बस्तु है कि इस्से रोगियों का रोग,

दुखियों का दुःख, थके हुओं की थकावट जाती रहती है-वैद्यक वाले लिख भी गये हैं-"अर्द्धरोगहरी निद्रा सर्वरोगहरी क्षुधा" घोर सन्निपात हो गया, दिन रात तलफ रहा है, एक क्षण भी कल नहीं पड़ती, दस मिनट की एक झांप आगई रोग आधा हो जाता है जीने की आशा बंध जाती है-अस्तु यहां तक तो हमने मिला के कहा अब अलग २ लीजिये—रात को बिना सोये बादशाह को भी आराम नहीं पहुंचता सारी दुनिया का सोना चाहो घर में भरा हो जब तक न सोइये चैन न पाइयेगा-सब दौलत और माल असबाब को ताक पर रख दीजिये और इस आरामदिह फरिश्ते के ज़रूर क़ैदी बनिये—अगर आप का दिल सैकड़ों झौंझट और फिकरों के बोझ से लदा हुआ है यहां तक कि उस बोझ को अलग फेंक घड़ी आध घड़ी कहीं किसी पेड़ की ठंडी छाया में बैठ सीरी बयार का सेवन कर थोड़ा विश्राम करने का भी समय नहीं मिलता; ऐसे अभागे को इस फरिश्ते की हवालात में भी जहां जीव मात्र को आराम और स्वास्थ्य मिलता है उसी तरह की बेचैनी और बेकरारी रहेगी-तात्पर्य यह कि सच्ची गाढ़ी नींद उन्हीं को आती है जिनके दिलों में कोई गैर मामूली शिकाइत नहीं रहती-बहुधा देखने में आता है ऐयाश शराबख़ार देर से सोते हैं और देर कर उठते हैं-इसी के बिरुद्ध विद्याभ्यासी १२ या १ बजे तक किताबों के साथ आंख फोड़ा करते हैं और चारही बजे उठ खड़े होते हैं-कितने ऐसे सुखिया जन हैं जिन को नींद बहुत जल्द आती है; कितने दरिद्र भी हैं जो दिन रात सोया करते हैं फिर भी नींद के बोझ से हरदम लदेही रहते हैं-बहुतेरे ऐसे भी सौभाग्य शाली हैं जिन को स्वभावही से बहुत कम नींद आती है और ऐसों को इस तरह का जागना स्वास्थ्य में कोई हानि नहीं पहुंचाता-परन्तु अधिकांश ऐसे हैं जिन को यह गैर मामूली जागना बहुत ही बिगाड़ करता है-कम सोना जैसा नुकसान पैदा करता है वैसाही अधिक सोना भी—और फिर रात में देर से सोने का जैसा बुरा असर तनदुरुस्ती पर है, उससे अधिक भोर को देर से उठने का होता है; विद्यार्थी को देर से उठने का परिणाम अत्यन्त हानिकारक है-मनु ने तो

सूर्योदय में सोने को यहां तक निषिद्ध कहा है कि जिसे सोते हुये सूर्य निकल आवें उसे चाहिये दिन भर उपवास करे और गायत्री का जप करता रहे-जो लोग पहिले सबेरे उठते रहे पर पीछे देर तक सोने की आदत में पड़ गये उन्हे याद रहे कि सूर्योदय के पहले उठ ज़रा बाहर की तरफ़ टहल आने से कैसा सुख मिलता था; आहा! उस समय प्रातः परिभ्रमण से चित्त को कैसी शान्ति और प्रसन्नता प्राप्त होती है; उषा देवी के प्रसाद का अनुशीलन करने वाला स्वच्छ शीतल वायु; बनस्पत्तियों पर मोती सदृश ओस के बिन्दु; पखेरुओं का कलरव; अरुण किरण के मिस मानो लाल झालर टकी हुई आकाश वितान की अनूठी छवि दिशाओं की मनोहरता मन को प्रमोद प्रत्येक अङ्ग में रोम २ को कैसी फुरती और सन्तोष देती हैं-वही ६ घड़ी दिन चढ़े तक ऐंड़ाय ऐंड़ाय खाट तोड़ने वाले के मन और शरीर में कैसा आलस्य शाठ्य और शैथिल्य तथा सुस्ती छाई रहती है कि संपूर्ण दिन का दिन नष्ट बीतता है-इसी से हमारे पुराने आर्य ऋषियों ने लिखा है—"अरुणकिरणग्रस्तां प्राचीं विलोक्य स्नायात्" माघ कवि ने शिशुपाल बध के ग्यारहवें सर्ग में प्रातःकाल का बड़ाही अनूठा बर्णन किया है जिस के पढ़ने वाले को प्रातः परिभ्रमण का पूर्ण अनुभव घर बैठेही प्राप्त हो सक्ता है-

अब धातु वाले सोने को लीजिये जिस से हमारा प्रयोजन धन से है-संसार के बहुत कम व्योहार ऐसे हैं जिनमें इसका काम न पड़ता हो; क्या फकीर क्या अमीर राजा से रङ्क तक सब इसकी चाह में दिन रात व्यग्र रहते हैं-कहावत है "इक कंचन इक कुचन पर किन न पसारो हत्थ" "सर्वे गुणाः कांचनमाश्रयन्ति"-इस सोने की लालच में पड़ मनुष्य कभी को वह काम कर गुज़रता है जिस से उस की मनुष्यता में धब्बा लग जाता है इस कारण सब लोग सोनेही को दोष देते हैं-अर्थात् पाप कर्म करने वाले को तो सब बचाते हैं और उस पाप के कारण सोने को जो एक जड़पदार्थ है सम्पूर्ण अधर्म और अन्याय का मूल समझते हैं-सोने के बल आदमी राई को पर्वत और पर्वत को राई कर दिखाता है किन्तु संसार की और सब बस्तुओं के समान

यह भी क्षण भंगुर है–बराबर देखते सुनते चले आये हैं कि लक्ष्मी चंचला है और एक पति से सन्तुष्ट नहीं रहती–जिस राह में इसे डालिये सोना एक बार अपना पूर्ण वैभव प्रकाश कर देगा पर अफ़सोस नेक राह में यह बहुतही कम डाला जाता है–कोई विरले विरक्तों की तो बातही न्यारी है नहीं तो संसार के असार प्रपंचों में आसक्त जन इसके लिये कोई ऐसा घिनौने से घिनौना काम नहीं बच रहा जिसे वे न कर गुज़रे हों; कहां तक कहें इसके लिये भाई २ कट मरते हैं बाप बेटे की जान ले डालता है–तवारीखों में कई एक राजा और बादशाह इसके उदाहरण हैं–किसी अङ्गरेज़ी कवि का कथन है–

For gold his sword the hireling ruffian draws;
For gold the hireling Judge distorts the Laws;
Wealth heaped on wealth nor truth nor safety buys,
The dangers gather as the treasure rise.

यद्यपि कलह के ३ कारण कहे गये हैं ज़र ज़मीन ज़र पर सच पूछो तो सब बिगाड़ का असिल सबब सिर्फ़ ज़र है–हमारा हिन्दुस्तान इस सोनेही के कारण क्षार में मिल गया–हमारे बेफिकिर होकर सोने से हमारे अपरिमित सोने पर इतर देशीय म्लेच्छ गण बाज़ और चील की तरह आ टूटे लाखों मनुष्य की जान गई अन्त के आखिरी बाज़ अङ्गरेज़ अपने मज़बूत पंजे से उस पर जमी तो गये अब रूस इसके लिये मतवाला हो रहा है और ताक लगाये हुये है पर उसका ताक लगाना व्यर्थ है अब तो यहां आय सोने की जगह धूर फाकना है "सिद्धि रही सो गोरख ले गये, खाक उड़ावैं चेले"–अस्तु इन सब बातों से हमें क्या सोना निस्सन्देह संसार में सार पदार्थ है यदि सोने वाला स्वयम् सारग्राही हो और उसे नेकी में लगावे–इस में एक यह अद्भुत बात देखने में आई कि पर्वत के सैकड़ों स्रोत से नदी के झरने की भांत जब यह आने लगता है तो सैकड़ों द्वार से आता है और जितने काम सब एक साथ आरंभ हो जाते हैं–इधर ज़ेवर पर ज़ेवर पिटने लगे, उधर पक्का संगीन मकान छिड़ गया, सवारी शिकारी अमीरी ठाठ सब ठठने लगे–

'अर्थेभ्यो हि विवृद्धेभ्यः संभृतेभ्यस्ततस्ततः।

क्रियाः सर्बाः प्रवर्तन्ते पर्बतेभ्य इवापगाः" ॥

जब यह जाने को होता है तो सब चीज़ ऊपर से देखने को यथास्थित बनी रहती है पर गजभुक्त कपित्थ सदृश भीतरही भीतर पोले पड़ टाट उलट मुह बाय रह जाते हैं-

"समायाति यदा लक्ष्मीर्नारिकेलफलाम्बुवत् ।
विनिर्याति यदा लक्ष्मी गंजभुक्तकापित्थवत्" ॥

ब्रटिश ईस्ट अफ्रिका।

हिन्दोस्थान प्राकृतिक प्रकार से एक ऐसा देश है कि जिसे संसार का एक सन्दूक कहा जावे तो उचित है-तीन ओर महान् समुद्र से घिरा हुआ है और उत्तरकी ओर भी संसार भर में सब से अधिक ऊंचे शिखर वाला हिमालय पर्बत एक बड़ा भारी रुकावट है-जिस से न तो बाहर वाले अन्दर आ सकते हैं व न भारत निवासी बाहर जा सकते हैं-जभी तो हिन्दुओं ने पूरा निश्चय करलिया है कि आर्यावर्त के सदृश संसार भर में कोई अन्य देशही नहीं-कर्म भूमि है तो यह है, उपजाऊ व उर्बरा पृथ्वी है तो यहांही की है, फल फूल हैं तो यहांही हैं, परिणाम यह कि उन्होंने तो पूरा विश्वास कर लिया है कि हिन्दुस्तान अनुपम देश है-परन्तु बाहर यदि कोई निकल कर देखै तो पता लगै यों तो कुवें का मेढ़क भी कूप को सागर ही मानता है-

यद्यपि अन्दर घुसने का कोई मार्ग नहीं है तथापि विदेशी लोग इस देश की अत्यन्त प्रशंसायें सुन २ कर सहस्रों प्रकार यत्न करके किसी न किसी भांति अन्दर आही पड़े-एक जाति पहाड़ों के बीच से मार्ग बना कर घुसी तो दूसरी जहाज़ों द्वारा आई व उन लोगों ने इस में सन्देह नहीं की भारत के उपजाऊपन का यथोचित लाभ उठाया बरन हम लोगों (सन्दूकचे के भीतर वालों) के भी रहन सहन व ख़यालात में कुछ न कुछ परिवर्तन डाल दिया; उनकी बातें सुनने व

पुस्तकें पढ़ने इत्यादि का परिणाम यह हुआ कि प्रथम स्वप्न के सदृश हम लोगों को कुछ२ अनुमान होनेलगा कि भारत के बाहर भी कोई सभ्य देश होगा जहां के लोग प्रायः आ २ कर हमारे प्रभु, गुरु, शिक्षक वा उपदेष्टा बन रहे हैं-निदान यद्यपि हिन्दुओं के आधुनिक पुराणों में लिखा है कि जगन्नाथ, द्वारिका, वा रामेश्वर इन तीन तीर्थों के पार (तात्पर्य समुद्र पार से है) जाने वाले धर्म से च्युत हो जाते हैं तथापि प्राचीन वेदादि के आज्ञा का अनुवर्तन करने वाले स्वदेश हितैषियों से न रहा गया आज दिन ऐसे सैकड़ों मनुष्य आर्यावर्त में विद्यमान हैं जो यूरोप व अमेरिका आदि सभ्यता सम्पन्न देशों को घूम कर वापस आ गये हैं—परन्तु भारत वासी फिर भी समुद्र पार जाने के स्वभाव वाले नहीं हैं नहीं तो अबतक बहुत अधिक उन्नति कर लेते—

मैं अपने स्वदेशी भाइयों को यह बताना चाहता हूं कि यूरोप व अमेरिका तो आज दिन उन्नति के शिखर पर विद्यमान हैं किन्तु संसार में ऐसे देश प्रकृति ने बहुतेरे बनाये हैं जो भारत भूमि के सदृश वा बढ़कर भी हैं—जिस देश को सर्वतोभाव व्यर्थ ऊसर जङ्गल इत्यादि मान कर लाखों वर्ष से किसी जाति ने परवाह नहीं किया वह देश यूरोप के रायल ज्याग्राफ़िकल सुसाइटी Royal Geographical Society के उद्योग से जांच लिया गया कि अवध व पञ्जाब की भूमिही के सदृश उर्वरा है-मेरा तात्पर्य अफ्रिका से हैं-इतना बड़ा महाद्वीप कब सम्भव था कि यूरोप वालों के अगाध बुद्धि द्वारा सुशिक्षित न बनाया जाय व करोड़ों रुपये का लाभ न प्राप्त किया जाय-इस में सन्देह नहीं कि सहारा का महान् जङ्गल भी इसी महाद्वीप में है परन्तु क्या आर्यावर्त में राजपूताना का मरुस्थल (जङ्गल) विद्यमान् नहीं है?

अफ्रिका महाद्वीप का कोई २ भाग बहुतही उत्तम है-इस समय जिस देश का वृत्तान्त मुझे सुनाना है वह वृटिश ईस्ट अफ्रिका नाम से विख्यात है-अर्थात् अङ्गरेज़ों का पूर्वी अफ्रिका मुम्बासापोर्ट (बन्दरगाह) है-यहां छोटी २ तो बहुतेरी झीलें हैं परन्तु मुम्बासा से ५८२ मील पर झील विक्टोरिया नियन्ज़ा बहुत बड़ी है व इस देश की

पश्चिमी सीमा जहां पर समाप्त होती है वहां पर अल्बर्ट नियन्ज़ा नामी झील औरों से बड़ी व विक० से छोटी विद्यमान् है—स्यात विक्टोरिया नियन्ज़ा का लम्बान ३०० मील व चौड़ान दो सौ मील है और वि० से अल्बर्ट नियन्ज़ा स्यात् दो वा तीन सौ मील के दूरी पर है इस प्रकार से जितना टुकड़ा वृटिश राज्य में पूर्वीय अफ्रिका का है वह लगभग १००० एक सहस्त्र मील पूरब पश्चिम व इस से कुछ कम उत्तर दक्षिण है—यह सारा देश प्रोटेक्टेरिट Protectorate कहा जाता है अर्थात् अभी यहां अङ्गरेज़ों का वैसा अधिकार नहीं है जैसा आर्यावर्त पर है किन्तु वे इस भूभाग के संरक्षक हैं—इस से दक्षिण में जो जर्मनी वालों का पूर्वी अफ्रिका है वहां के वे भी संरक्षक ही हैं—सन् १८६० से १८९० तक व विशेषतः ८० से ९० तक युरोप महाराजों में इस सारे अफ्रिका को आपस में यथोचित प्रकार से विभाजित करने की एक अच्छी बहस जारी रही व अन्त में प्रत्येक ने न्यूनाधिक भाग प्राप्त किया—पृथ्वी के विस्तृत्व के विचार से तो फ्रान्स वालों का प्रथम नाम लिया जा सकता है परन्तु सहारा का विख्यात मरुस्थल इन्हीं के हिस्से में है इनके पीछे वृटिश का नम्बर है परन्तु मनुष्यों की सङ्ख्या के अधिक होने व पृथ्वी के उर्वरा होने का विचार किया जावे तो अफ्रिका में इन का औव्वल नम्बर रहैगा—सारे अफ्रिका की आबादी साढ़े तेरह करोड़ है जिसमें से चार करोड़ से अधिक प्रजा वृटिश के शान्तिराज्य का लाभ प्राप्त करती है—इस पूर्वीय वृटिश अफ्रिका की मनुष्य सङ्ख्या १,२९,१०,०० एक करोड़ उनतीस लाख दस हज़ार है जैसा निम्न पुस्तक में लिखा है:—

Portition of Africa by J Scott Ketlie A S to the Royal Geographical Society Dondon, Edward, Stanford, 26 & 27 Cocks pur Street Charing cross S. W. (1893)

यह पूरा नाम व पता इस लिये लिख दिया गया कि यदि उन्हीं महाशय को सारे अफ्रिका के सम्पूर्ण वृत्तान्त जानने की अभिलाषा हो तो वे उक्त पुस्तक को देख सकते हैं—यद्यपि ऐसीं २ कई भारी पुस्तकें और पाई जा सकती हैं जिन के नाम मैं नहीं स्मरण रख सका—

सन १८९७ में अङ्गरेज़ यात्रियों ने पार्लियामेन्ट को यह निश्चित कराया कि इस पूर्वी अफ़्रिका में रेलवे का बना लिया जाना प्रथम कार्य है अतः मुम्बासा से झील विकटोरिया नियन्ज़ा के तट (पोर्ट फ्लोरेन्स) तक रेलवे लाइन बनने का आरम्भ सन् १८९४ से हुआ—इस झील के उस पार जो देश है उस का उगन्डा नाम है अतः रेलवे का नाम मुम्बासा उगन्डा स्टेट रेलवे रक्खा गया—इस कार्य को थोड़े ही व्यय में पूरा करने के लिये यह निश्चित हुआ कि आर्यावर्त के मनुष्य यहां काम करैं (नहीं तो यदि यूरोप वाले सारे कर्मचारी व कुली हो कर आते तो जितना अधिक व्यय पड़ता वह सब समझ सक्ते हैं) अस्तु चालीस हज़ार कुली हिन्दुस्तान से बुलाये जाने की अज्ञा हो गई तदनुसार गत मार्च मास तक उक्त सङ्ख्या की पूर्ति हो गई और लाहौर में जो एजन्ट कुली भेजने पर नियुक्त था वह पृथक् कर दिया गया—दफ़्तर के काम करने वाले क्लर्क ओवर्सियर अकाउन्टैन्ट इत्यादि को भेजने के लिये एक अङ्गरेज़ अजन्ट कराची में नियुक्त है—इस देश के मनुष्य भी थोड़े बहुत सरकारी काम में नियुक्त हुये हैं—सब को रैसन (आटा दाल घी नमक मिर्च) व रहने को मकान वा छोलदारी वेतन से भिन्न मिलता है—कुलियों को १२), बढ़ई इत्यादि को ४५) व बाबूओं को ५०) से २५०) तक वेतन दिया जाता है—अब केवल थोड़ेही मासों में लाइन झील को पकड़ लेवेगी—अबतक में यहां पुलिस, पोस्ट, अदालतें इत्यादि अत्यावश्यक मुहकमें खुल गये हैं—मुम्बासा व नैरोबी नामी दो शहर बन गये हैं नकूरो भी एक साल में तीसरा नगर समझा जाने लगेगा—विद्वान् व अनुभवशाली (तजरबेकार) अङ्गरेज़ों ने निश्चय कर रक्खा है कि दश पन्द्रह ही वर्षों में यह देश अन्य सभ्य देशों के सदृश हो जावेगा किन्तु किसी की तो अनुमति है कि अन्य साधारण देशों से बहुत बढ़ कर होगा (Finest in the world).—प्राकृतिक सारी वस्तुयें जो मनुष्य के लिये आवश्यक हैं वह सभी यहां विद्यमान हैं—परीक्षा से जाना गया है कि गेहूं से लेकर सारे अनाज व आलू आदि सारी भाजियां और सारे फल फूल व कपास (रुई) गन्ना काफ़ी अफ़ीम इत्यादि सभी वस्तुयें यहां की धरती में उत्पन्न हो सक्ती हैं (कहीं २ पर

उत्पन्न किये गये हैं) मौसम बरसात तो बङ्गाल से भी यहां बढ़ कर है किन्तु सरदी गरमी सारे देश में यक सां नहीं है मुम्बासा व इस के निकटस्थ स्थानों में प्रायः प्रयाग के मई मास (वैशाख) की सी गरमी सदा बनी रहती है व इस से २०० दो सौ मील पश्चिम जा कर कार्तिक की सी सरदी सदा वर्तमान रहने वाले देश मिलते हैं—

तत्पश्चात् नैरोबी स्थान जो मु० से ३५० मील पर है कुछ और अधिक सरद है व नकूरो स्थान ४५० मील पर व यहां से मऊ पहाड़ तक (मील ५३० तक) अत्यन्त सरद ऋतु प्रयाग के पूस माघ के सदृश सदा वर्तमान रहती है परन्तु बीच २ में कुछ कम भी हो जाती है— मऊ स्थान मील ४९०| इस देश भर में सब से ऊंचा स्थान माना जाता है—समुद्र से ८००८ आठ सहस्त्र फ़ीट ऊंचाई पर यह स्टेशन है और फिर मील ५३० से आगे ढालू नीचाई आरम्भ होती है जहां सरदी नहीं है किन्तु झील वि० के इर्द गिर्द मुम्बासा के सदृश ही गरमी बनी रहती है—

कुछ भी हो मुझे जब ज्येष्ट अषाढ़ की असह्य उष्णता व लूह प्रयाग वा लाहौर इत्यादि की याद आती है व इन्हीं महीनों की यहां (नकूरो व तटस्थ देशों) की सरदी व सुन्दर मन्द सुगन्ध और स्वच्छ वायु के स्पर्श का अनुभव प्रति दिन होता है तो निस्सन्देह यही भासित होता है कि परमात्मा ने मुझे इन दिनों नरक से निकाल कर मानों स्वर्ग में भेज दिया हो—

यहां अबादी नाम मात्र है व जो मनुष्य हैं भी वे बेचारे अर्द्ध पशु तुल्य न जानें कितने लाखों वर्ष से इसी अवस्था में पड़े हैं—भर्तृहरि जी के कथनानुसार (अहार निद्रा भयमैथुनञ्च......) सिवाय उतने कामों के जितने पशु भी करते हैं और कुछ वे नहीं जानते—स्वयम् उत्पन्न होने वाली सकरकन्दी व अन्य ऐसी बस्तुयें वा पशुओं को मार कर खाते और प्रायः मुरदा भी खाते हुये सुने गये हैं किन्तु अब तो रोटी व शक्कर आदि का स्वाद भी इन को मिलने लगा है—कपड़े पहिनना नहीं जानते थे परन्तु अब वह भी सीखते जाते हैं—नैरोबी स्थान में गवर्नमेंण्ट स्कूल इन की शिक्षा के लिये खुलने ही वाला है किन्तु

मिशनरियों ने तो ज़न्ज़िबार में व अन्य स्थानों में भी कई स्कूल बहुत दिनों से जारी कर रक्खे हैं-ये लोग हर समय प्रसन्न चित्त रहते हैं-हम लोगों की यथोचित प्रतिष्ठा करते हैं आज्ञाकारी व शुद्ध हृदय हैं-छल कपट चालाकी अभी इन्हों ने नहीं सीख पाया है-सुहेली, किकुई, व खरूभा, ससाई इत्यादि इन की जातियां हैं व प्रत्येक की मातृ भाषा भिन्न २ हैं जैसा बङ्गाली भाषा, हिन्दी, दक्षिणी व गुजराती इत्यादि का फ़र्क़ है कि मूल सब का संस्कृत से मिलता है वैसाही इन में मानना चाहिये-इन की भाषा में अरबी के शब्द बहुत आते हैं और इतिहास से यह बात सिद्ध है कि यदि इन का संसर्ग कभी कुछ हुआ है तो अरब वालों से जो तिजारत करते २ इधर आते रहे और इन लोगों को अपनी बोली, धर्म और रीति व्यौहार थोड़ा बहुत सिखला दिया-ये लोग पूर्व काल में जीवन पर्यन्त के लिये गुलाम बना कर रक्खे जाने के लिये बेंचे जाया करते थे परन्तु दया रूपा श्री महाराणी राज राजेश्वरी के विद्यमानता में संसार के किसी भूभाग में भी ऐसा अत्याचार जारी रहै व वे चुप रहैं यह कब सम्भव था निदान उन्हों ने अपने पुत्रों (अंगरेज़ों) को आज्ञा दिया कि जैसे बने यह अत्याचारी रिवाज बन्द ही कराया जावे तदनुसार महान् उद्योग से चिरकाल में कृतकार्यता प्राप्त हुई और महाराणी का यश प्रत्येक अफ्रिका निवासी गाने लगे-(यह प्रचार यहां वृटिश का राज्य होने से पूर्व ही टूट चुका है) ॥

जब तक यहां खेती व्यापार व अन्य सुशिक्षित देशों की बातें न होंगी तब तक गवर्न्मेन्ट को व्यय तो दूना दून परन्तु आय कुछ भी नहीं होवेगी यहां के स्वदेशी लोग सारे कार्य करने लग जावैं इस के लिये अधिक नहीं तो सौ दो सौ वर्षों की देरी अभी से है व यूरोपीय महाशय गण यहां अवश्य आ कर सब कुछ करैंगे सही परन्तु इतने बड़े देश के लिये जितने अधिक मनुष्यों की आवश्यकता है वह यूरोप स्यात् नहीं पूरा कर सकेगा कुछ इस कारण से नहीं कि वहां की मनुष्य सङ्ख्या न्यून हो परन्तु इस कारण से कि वहां के ही व्यापार इतने हैं कि जिन से उन को कहां अवकाश है तथा आस्ट्रेलिया व अमेरिका जैसे महान् देशों को भी बसाना इन्हीं के सिपुर्द है अतः यहां के राजा

प्रजा दोनों का लाभ तभी सन्तोष दायक होगा जब भारत निवासी यहां आय कर बसें व खेती तथा व्यापार का काम अपने हाथों में लेवें-इस से वन का भी बड़ा लाभ है-अभी यहां के पृथिवी (ज़मीदारी) का मूल्य केवल नाम मात्र होगा और सरकारी लगान भी नाम ही मात्र के लिये नियत होगी (व निन्नानवे ९९ साल के लिये पट्टे पर सरकार बिना मूल्य भी पृथिवी देती हैं) अतः सारी पैदावार ज़मीदारी व कश्तकारी करने वालों ही के भाग में बहुत वर्षों तक पड़ेगी-व यतः यहां अभी तो बम्बई से ही पिसापिसाया आंटा व दली हुई दालें आती हैं इस कारण भाव आंटा दाल का केवल दो तीन सेर रहता है इस कारण जो लोग अभी ही यहां खेती करेंगे उन की उपज बहुत महंगे भावों बिकेंगी व बहुत लाभ होगा:-

यह तो सब ठीक है परन्तु हिन्दुस्थान वालों में इतनी बुद्धि कहां कि वे इस पर तनिक भी ध्यान देवैं-काल पर काल पड़ रहा है कड़ाके पर कड़ाका हो रहे हैं टैक्स पर टैक्स कसा जा रहा है परन्तु देश न छोड़ैंगे-जन सङ्ख्या के अधिक बढ़ जाने से सारे भारत वर्ष में कोलाहल पड़ गया है कि ये तीस करोड़ मनुष्य क्या खाकर जीवें कोई टेक्निकल स्कूल का अनुमोदन करता है कोई सुनारों का पेशा बन्द कराना चाहता है कोई सारे हिन्दुओं के सोने चांदी के आभूषण ले लिये जाने की प्रस्तावना करता है इन सबों के साथ मैं भी एक सलाह दिये देता हूं जिस का जी चाहै वह मान लेवै-

तीस करोड़ में से यदि केवल एक करोड़ वा आधे करोड़ भारत निवासी भी गवर्नमेंट आफ़ इण्डिया की आज्ञा से वृटिश ईस्ट अफ्रिका देश को चले आवें व यहां पर खेती करैं तो आशा व पूर्ण आशा है कि अपना व अपने कुटुम्ब का यहां भली प्रकार भरण पोषण करते हुये भी कुछ धन भारतीय निज सम्बन्धियों व धर्म के ठेके धार पोथा धारी पण्डों वा देश हित कार्यों को देते रह सकेंगे-व यदि ऐसा हो तो एक करोड़ मनुष्य का जो भार भारत पर है वह न्यून होने से कुछ हलका भी हो जायगा-

अभी तक में यहां पढ़े लिखे व अपढ़ सब मिला कर ५०००० पचास

सहस्त्र पञ्जाबी (जिन में दाल में नमक की भांति पश्चिमोत्तर देश निवासी आदि भी होंगे) भारत से गत छह बर्षों में आये और स्वानिर्बाह भली प्रकार करके तीन करोड़ व न्यून से न्यून भी डेढ़ करोड़ रुपया भारत को भेज चुके होंगे क्योंकि प्रत्येक कुली १२) व रेशन पाता है व प्रायः १०) रुपया मासिक वे लोग अपने कुटुम्ब पालन के निमित्त भेज देते हैं व पास जमा करते हैं इस के अतिरिक्त १ हज़ार से अधिक बाबू लोग हैं जो ५० से ले कर ३००) तक कमाते हैं—

अहा! क्याही अच्छा अवसर प्राप्त है—हम को वृटिश राज्य का सहस्त्रशः कृतज्ञ होना चाहिये निस्सन्देह जिस के ही शान्त शासन के बदौलत हम भारत रूपी सन्दूकचे से बाहर तो निकल सके—निकल कर दुःख व कष्ट प्राप्त किया हो सो नहीं किन्तु अति हर्ष व आनन्द के भागी बने इतनाही नहीं किन्तु हर्ष का यह बिषय है कि हिन्दू जाति यूरोप वालों के निकट साहसी उद्यमी सिद्ध होती जाती है अर्थात् यहां के कार्यवाही के रिपोर्ट में भारत निवासियों के उद्योगी व नमक हलाल होने की प्रशंसा की गई है तथा यह भी माना गया है कि हिन्दुस्थानियों ही को यहां आकर खेती करना उचित है—इङ्गलैंड का टाइम्स आफ़ लंडन लिखता हैः—

E. AFRICA IS THE AMERICA OF THE HINDOO

ईस्ट अफ्रिका हिन्दू के लिये अमरिका है॥

सायत हिन्दू से इस का तात्पर्य हिन्दुस्थानियों मात्र से होगा चाहे वे हिन्दू हों या मुसलमान ।

यह बिषय भी बिचारणीय है कि उक्त पचास सहस्त्र में चालीस सहस्त्र मुशलमान व केवल दश सहस्त्र ($\frac{1}{5}$) हिन्दू पाये जाते हैं इसी से सिद्ध हो रहा है कि हिन्दुओं की कैसी सोचनीय दशा है—रूखी खावेंगें परन्तु जहाज़ पर चरण न धरेंगे कि कहीं धर्म न भाग जावै॥

यहां शेर, चीते, गैंड़ा, रीछ, शुतुरमुर्ग, जङ्गली घोड़े, हाईना, कुबोको (दरयायी घोड़े), हाथी, मृग अनेकों प्रकार के और गाय भैंस बकरी भेंड़ी इत्यादि २ पशु और चित्र बिचित्रित पक्षी व बड़े सुन्दर

तोते (भारत वालों से बड़े) चितकबरे रङ्ग के बहुत २ अधिक पाये जाते हैं-जीवों की बहुतायत का होना बहुत पुष्ट प्रमाण (सबूत) इस बात का है कि यहां के पृथ्वी व जल बायू में जीव धारियों (पशुओं व मनुष्यों) को भरण पोषण करने व जीवित रखने की शक्ति है :--तो फिर क्यों न आर्य सन्तान अपनी दरिद्रताव करे दिन दूर करने के लिये यहां आकर धरती के उपजाऊपन का लाभ प्राप्त करें--यहां कई सौ मील का देश शरद प्रधान होने से बुद्धिमानों का निश्चय है कि इन जगहों में रुई गन्ना बहुत ही अधिक उत्पन्न हो सकेगा जिस से खेती का कार्य करने वालों को बड़ा ही लाभ हो सक्ता है-

अभी इस देश सम्बन्धी बहुतेरी बातें सुनानी हैं परन्तु सारी इकट्ठी लिखने से पाठकों को भी ऊब आ जायगी अतः अब इति श्री करता हूं परन्तु इतना फिर भी कहूंगा कि मन बहलाव के मज़मूनों के शदृश यह विषय एक कान से सुन कर दूसरे से निकाल देने के लिये नहीं लिखा गया है-हिन्दोस्थान का एक २ बच्चा भी स्कूल में जुग़राफ़िया पढ़ता है जिस के बिना याद हुये परीक्षा में उत्तीर्ण ही नहीं हो सक्ता परन्तु वह एक व्यर्थ सिरखप्पी मान ली गई है किन्तु एक यूरोप वाले हैं कि ज्याग्रफ़ी ने ही इन्हें सारे अफ्रिका अमेरिका व अन्य देशों का प्रभु बनाही दिया है—हम आर्यावर्त निवासी यदि और कुछ न सही तो जूठनही से गुज़ारा करे—महान पुरुषों (राजा विद्वान् आदि) का दिया हुआ प्रसाद भी आदरणीय ही होता है—अस्तु कुछ भी हो जिसे अब इस ज़माने में हिन्दोस्थान में दुःख मिल रहा हो उसे स्वकष्ट निवृत्यर्थ एक मात्र उपाय यही है कि वह समुद्र पार कहीं न कहीं चला जावे व ईश्वर चाहेगा तो वह सुखी व प्रसन्न ही हो सकेगा :—

जगदम्बा प्रसाद बर्मा क्लर्क

मोलो रेल स्टेशन बृटिश अफ्रिका

———

गीतासार समुच्चय ।

"गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः"

ऊपर का यह बाक्य बहुतही सोपपत्तिक प्रतीत होता है "गीता सुगीता अर्थात् जहां तक बनै सावधानी पूर्वक गीता का मनन विचार अभ्यास और पुनः २ उस की आवृत्तिकरता रहै-और २ शास्त्रों के विस्तार से क्या? तात्पर्य यह कि अनेक शास्त्र और विविध दर्शनों का पठन पाठन किये हैं पर गीता में कहे हुये भगद्वाक्यों के गूढ़ार्थ को नहीं सोचा समझा तो उसको दर्शन के पठन पाठन और अभ्यास से कोई फल नहीं है-अथवा केवल गीता को अच्छी तरह विचारे और समझे हुये है अथच तदनुसार आचरण कर रहा है तब और सब शास्त्रों के बाद विबाद में फसकर बुद्धि को अत्यन्त क्लेश देना व्यर्थ है-क्योंकि यह तो सब उपनिषदों का सार है जहां तक बना मक्खन खींच लिया गया है-इसी से कहा गया है

'सर्वोपानिषदो गावो दोग्धागोपालनन्दनः ।
पार्थोवत्सः सुधीर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत" ॥

सब उपनिष्ट मानो गऊ हैं जिसके दुहने वाले परम प्रवीण गोपाल नन्दन भगवान् कृष्णचन्द्र हैं अर्जुन उन गौवों का दूध पीने वाले बछड़ा हैं-अर्थात् ऐसा सयाना बछड़ा उन गौओं का न होता तो कैसे वो गौवें पेहनातीं और दुही जाती-"सुधी" अथवा मनन निदिध्यासन शक्ति सम्पन्न बुद्धिमान उस दूध के पीने वाले है-जो दूध दुहा गया है वह अमृत रूप है सो भी थोड़ा नहीं किन्तु "महत" इतना अधिक है कि तृप्ति पूर्वक के अघाय के जितना चाहे पीता रहै कभी चुकेगा नहीं-बहुतही ठीक है इसके अर्थ और तात्पर्यों पर जितना ही डूबो उतनाही इसके गूढ़ार्थ निकलते आवेंगे मन आनन्द में परिलुप्त हो जाता है आदमी अपने को भूल जाता है हम कहां हैं क्या कर रहे हैं कुछ सुध पुध नहीं रहती-ख्रीष्ट धर्म्मावलम्बी अपने इसाई मत के बड़े नाज़ां है और अपने मत की पुस्तक का धर्म पुस्तक

नाम रक्खे हैं-किन्तु गीता के मुकाबिले आध्यात्मिक गूढ़ार्थ और सत्य धर्म का गूढ़ तात्पर्य उनके बइबिल में जिसको वे धर्म पुस्तक कहते हैं कहीं दसवां हिस्सा भी नहीं है-ऐसे २ रत्न हमारे पुराने आर्योंही के मस्तिष्क रूप भण्डार में छिपे छिपाये पड़े हैं जो उन रत्नों के खोजने वाले हैं वे पाजाते हैं-"जिन ढूंढा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ"-समय की बलिहारी है जो चाहे सो करावे ये इसाई मतावलम्बी अब हमें सत्य धर्म शिक्षक और सच्ची राह दिखलाने वाले बनते हैं-अस्तु गीता के गूढ़ार्थ को विचार शान्ति लाभ किये हुये अणुमात्र भी इसपर क्षोभित न हो प्रसन्न चित्त रह उन्हीं अमोघ रत्नों का यह एक टुकड़ा याद करते हैं "प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किंकरिष्यति"——

श्रीमद्भागवत् गीता आध्यात्मिक विचार का तो भाण्डार हई है Politics राजनीति तथा समाज शिक्षा इसमें उस दरजे की है जो कदाचित् आधुनिक राजनीतिज्ञ Politician Statesman तथा समाज संशोधकों को कभी सूझैगी भी नहीं-उस की सार उध्रित कर आज हम अपने पाठकों को सुनाते हैं-आशा है वे हमारे बाल चापल पर हसैंगे नहीं किन्तु एकाग्र चित्त हो हम जो कहते हैं वह सर्वथा निस्सार है कि उसमें कुछ तत्व भी है इस को बिचारैंगे-

"क्वाहं मन्दमतिः क्वेदं मन्थनं क्षीर बारिधेः।
किन्तत्र परिमाणुर्वै यत्र मज्जति मन्दरः" ॥

अर्जुन को जब विषाद हुआ डर से और दया के भाव से पूर्ण हो सर्वथा युद्ध से पराङ्मुख हुआ चाहते थे और यही ठान लिया कि किसी तरह लड़ने में कल्याण नहीं है-उस समय भगवान कृष्णचन्द्रही की अगाध बुद्धि का गौरव था कि ऐसे भीरू और डरपोंक में "अशोच्यान न्वशोचंस्त्वं" आदि बाक्यों के द्वारा पुनः उन्होंने बीरत्व अर्जुन में संस्थापित किया-दूसरी अध्याय के ग्यारहवें श्लोक से इसका आरम्भ है-आत्मा का नित्य अविनाशी, अजर, अमर, आदि गुणों का सिद्ध होना जो कुछ है उस पर अनेक बड़े २ प्रसिद्ध विद्वान् दार्शनिक न जानिये कितनी उक्ति युक्ति भाष्य और बिबरण कर चुके हैं हम

ऐसे अल्पज्ञ अब उसपर और क्या नई युक्ति निकालेंगे-मैं तो समझता हूं इतना अनूटा आध्यात्मिक विषय किसी देश या समाज के उत्कृष्ट से उत्कृष्ट विद्वान् को नहीं सूझा-ऐसी २ कल्पनायें केवल आर्य्योंही के मस्तिष्क और प्रतिभा तथा सूक्ष्म दर्शिका का परिणाम है-हम कृष्ण भगवान् के राज नैतिक कौशल की समालोचना केवल किया चाहते हैं—कि ऐसे नाजुक मैाके पर जब दोनों ओर की सेना और एक से एक चढ़ बढ़ के बीर बांकुड़े योद्धा लड़ने को सन्नद्ध थे; ऐसे समय पाण्डवी दल के प्रधान मुखिया अर्जुन जिन के बाहुबल की विजय पाने के लिये सबी प्रतीक्षा कर रहे थे उन में क्लीवता का आ जाना कैसा नाजुक वक्त था ; जो कहीं अर्जुन ऐसे समय युद्ध से पराङ्मुख हो जाते तो बिलकुल बंटाधार हो गया था ऐसे मैाके पर कृष्णही का राजनैतिक कैाशल था कि उन में पुनः बीरत्व संस्थापित कर लड़ने को सन्नद्ध और दृढ़ किया-इसी से हम कहते हैं कि गीता में ब्रह्मज्ञान और अध्यात्मिक विषय केवल नहीं है किन्तु राजनीति समाज नीति तथा उपदेश उस औव्वल दरजे का है जो कदाचित् और ठैार न मिलेगा :-

इसमें सन्देह नहीं जो कुछ भगवान् ने जिस उपपत्ति के साथ कहा है उस पर पूरा २ अमल कर ले तो स्नेह बन्धन से सर्वथा मुक्त हो शान्ति का आलय बन बैठे प्रियजन वियोग दुःख फिर उसे न सतावे-उसी दूसरी अध्याय के १४ औ १५ श्लोक में तितिक्षा और शहनसीलता उस पराकाष्टा की प्रगट किया है जिस का अभ्यास कर लेने वाला जीवन मुक्त हो सक्ता है-

"मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदा। आगमापायिनो ऽनित्यास्तां तितिक्षस्व भारत । यंहि नव्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥

पृथ्वी, जल, तेज, बायु, आकाश ये पञ्च महाभूत की ५ तन्मात्रा जिनका असर आंख, कान, नाक, जिह्वा, त्वचा ५ कर्मेन्द्रियों पर पड़ा

करता है सरदी गरमी आदि यावत सुख दुःख की देने वाली मानी गई हैं-न जानिये कब और क्यों उन का बुरा भला असर मनुष्य की कर्मेन्द्रियों पर आपड़ता है और यह भी कोई नहीं जान सकता कि कब तक वह असर कायम रहेगा—पर यह मालूम है कि यह सदा इसी ढंग का न रहेगा न सर्वथा अपने बश का है तो भाई जैसे हो तैसे उसे सहो-

यहां पुरुषर्षभ अर्जुन के लिये बड़ा सयुक्तिक सम्बोधन दिया गया है—तात्पर्य यह कि जो पुरुषों में श्रेष्ठ हैं वे साधारण लोगों के समान बड़ी से बड़ी विपत्ति में भी नहीं घबड़ाते-दूसरे यह कि तुम जो पुरुषर्षभ हो तो किस लिये? अवश्य सहो जिसको ये शीतोष्ण सुख दुःख नहीं व्यापते या व्यथा देते; सुख दुःख में एक सा रहता है; जीवनमुक्ति उसके लिये निश्चित है; धीर उसी को कहेंगे-

उपरान्त आत्मा का नित्य होना ३० श्लोक तक प्रतिपादन किया गया हैं-जिसमें सिद्ध किया गया है कि पांच भौतिक शरीर से आत्मा का कुछ शरीर से सम्बन्ध नहीं है जो शरीर के नाश होने पर नहीं नष्ट होता इन श्लोकों का गूढ़ार्थ सब उपनिषदों का मक्खन सार खींच लिया गया है-आत्मवादियों के लिये अपना पक्ष पुष्ट करने का एक मात्र अमोघ शस्त्र है

फिर लड़ना क्षत्रियों का मुख्य धर्म तुम क्षत्री कैसे जो मुह मोड़ लेते हो—स्वर्ग का द्वार खुला हुआ है जहां जाने को प्रोत्साहित हो क्षत्रिय ऐसे रण क्षेत्र को बड़ा सुख मानते हैं—जो तुम अपना धर्म समझ भी न लड़ोगे तो धर्म और कीर्ति दोनों खो बैठोगे और धर्म-च्युत हो पापी बनोगे-

आगे बढ़ कर कैसी अच्छी लोकोक्ति दिया हैं "संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणाद् तिरिच्यते" जो सब लोगों में माननीय और पूजनीय रहा है पीछे उसका निन्दनीय हो जाना मरण से भी बढ़ कर है-फिर आगे बुद्धि योग की प्रशंसा में बुद्धि को एक ओर स्थिर करने में यह श्लोक बड़ा उत्तम है

"व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाखाह्यनन्ताश्च बुद्धयो व्यवसायिनाम्" ॥

जिन की बुद्धि बहुत ओर दौड़ रही है सदा संशय में पड़ी रहती किसी एक बात पकड़ स्थिर नहीं रहती उसे एक ओर एक बिषय में स्थिर होना उचित है-कहा भी है "संशयात्माबिनश्यति" संशयात्मक व्यवसायियों की बुद्धि की न जानिये कितनी शाखा प्रशाखा होती हैं; कितने अन गिनत बिषयों पर लगी रहती है कौन जान सक्ता है-इस्से स्थिर बुद्धि होना सब से श्रेष्ट है-इसी बुनियाद पर भगवान ने आगे फिर काम्य कर्म का खण्डन किया है जिस्मे यज्ञादि वैदिक कर्मकाण्ड की खूबही जीट उड़ाया है भोग और ऐश्वर्य में फसे हुए लोगों की बुद्धि अध्यात्मिक बिषयों में स्थिर नही होती यह इस्से बड़ी हानि दिखलाया है-ऋचा भी ऐसा ही प्रति पादन करती है-

"न तं विदाथ य इमा यजाना न्यद्युस्माकमन्तरं बभूव।
नीहारेणं प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति" ॥

वे वैदिक ब्राह्मण जो यज्ञ कराते फिरते हैं उनसे कहता है तुम उस परमात्मा को नहीं जानते तुम्हारे और उस्के बीच बड़ा अन्तर है-तुम्हारी दृष्ट को त्रिगुणात्मक माया ऐसे छाये हुये है जैसा कोहिरा सूर्य को आच्छादित किये रहता है-तुम गप्प करने वाले उदर भरि हो पेट पालने से मतलब आज इस यजमान के यहां शान्ति पाठ कर दक्षिणा लिया कल उस्के यहां-ऐसाही सबेरे से सांझ लौं घूमते फिरते हो आत्मा का अखिल तत्व तुम ने कुछ न पहिचाना-इसी से भगवान् आगे कहते हैं

"त्रैगुण्यबिषया बेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्" ॥

वेद त्रिगुण बिषयों के प्रतिपादक हैं-हम कहते हैं अर्जुन तुम त्रिगुण से परे हो-तुम निर्द्वन्द्व हो अर्थात् सुख दुःख पाप पुण्य शीत उष्ण इस से तुम्हारा कुछ भी लगाव नहीं है-तुम सदा सत्य में स्थित

रहो न तुम अपने लिये योग क्षेम चाहो इस लिये कि तुम आत्मवान् हो-सर्वथा कर्म का खण्डन न कर कर्म करने को कहा है पर फल की बासना का त्याग कहते हैं जिसमें गीता का यह टुकड़ा बहुत अच्छा मालूम होता है-"कर्मण्येवाधिकारस्ते माफलेषु कदाचन" सच है किसी काम को सहूलियत से सावधानी के साथ करने में हमारा अधिकार अलबत्ता है किन्तु उसका भला या बुरा क्या परिणाम होगा कौन जान सकता है-निरे पुरुषार्थवादी भाग्य के न मानने वालों पर बड़ी भारी चोट दी गई है फिर कहता है-

"योगस्थः कुरुकर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय ।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समोभूत्वा समत्वं योग उच्यते" ॥

योग में स्थित हो कामकरो; सिद्धि और असिद्धि में सम्भाव रह : सिद्धि या असिद्धि में इसी एक से रहनेही का नाम योग है.-

पहले कहा है "माकर्म फलहेतुर्भूः" तुम्हारा कर्म फल का हेतु न हो इस लिये कि "कृपणा फलहेतव;" जो फल के हेतु हैं वे कृपण हैं; औदार्य उन्में नहीं स्थान पाता मनुष्य वेही हैं जो प्रकृति के उदार हैं-जो बुद्धि योग वाले है अर्थात् जो बुद्धि पूर्बक काम करते हैं उन से नीचा काम दूर रहता है "दूरेणह्यवरंकर्मबुद्धियोगात्धनंजय" योग का दूसरा लक्षण फिर दिया है "योगः कर्मसु कौशलम्" किसी काम करने में कुशलता इसी का नाम योग है-चित्त के एकाग्र में जब बुद्धि चल बिचल नहो तब जानना चाहिये इसे कर्म में कुशलता प्राप्त हुई जिसे योग कहते हैं-अब फिर पूछते हैं यह कैसे जाना जाय कि यह एकाग्र चित्त है-इसपर कहते हैं

"यःसर्बत्रानाभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्
नाभिनन्दति न द्वेष्टितस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता"

शुभ या अशुभ भला या बुरा अपने अनुकूल या प्रतिकूल जो कुछ दैव की इच्छा से आ पड़े उसमें अनुकूल पर प्रसन्नता जिसे न हो प्रति-

कूल पर द्वेष जिसे न हो उसे जानना चाहिये कि यह स्थिर बुद्धि हुआ—इसी को और साफ करते हैं

"दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः ।
बीतराग भयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते" ॥

दुःख आने पर जो घबड़ा कर किं कर्तव्यता मूढ़ नहीं होता सुख आ पड़ने पर बेपरवाह है; जिसे राग अर्थात् प्रेम में आय अपने प्रेमी के बश में जो नहीं हो गया ; कहीं से या किसी से जिसे भय नहीं है; न अनुचित पर क्रोध होता है; उसे जानना चाहिये कि यह स्थिर बुद्धि है—कहां है आधुनिक शिक्षा के महा अभिमानी हमारे नवयुवक और वे जो सिद्ध करते हैं कि Morality हिन्दुओं के धर्म ग्रन्थ में नहीं है—देखै आके कि Moral teachings का सत्त निकाल के रख दिया गया है—

अब आगे फिर कहते हैं इन्द्रियां बड़ी प्रबल हैं चंचल मन को बलात्कार अपने बश में कर लेती हैं—"इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः" इस लिये जिसने इन्द्रियों को अपने बश में कर लिया उसे स्थिर बुद्धि कहना चाहिये "बशेहि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता"—

इन्द्रियां बश में न हो किस क्रम से मनुष्य को नष्ट कर देती है सो आगे कहते हैं—

"ध्यायतोविषयान्पुंसः संगस्तेषूपजाते। संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधो भिजायते । क्रोधाद्भवति संमोहः संमोहात् स्मृतिविभ्रमः । स्मृतिभ्रंशात् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणष्यति ॥

जिस इन्द्री का जो विषय है उसका दिन रात ध्यान करते २ उस विषय की प्राप्ति उसे हो जाती है—तब उतने से सन्तोष न हो उस बात की कामना उसे और बढ़ती है और उस के लिये चेष्टा करने पर

जो काम याबी न हुई तो क्रोध होता है—क्रोध आने पर मोह अर्थात् उचित अनुचित का विचार कम हो जाता है कभी को बिलकुल नहीं रहता—विचार न रहने पर स्मृति विभ्रम अर्थात् उलटा को सीधा सीधा को उलटा मानने लगता है तब कार्य अकार्य का विचार करने वाली बुद्धि नहीं रहती जब बुद्धि नष्ट हुई तब उस के नाश में कितनी देर किसी से प्रेम किसी से द्वेष जिसे नहीं है मन से विषय बासना में लिप्त न हो आंख नाक कान आदि इन्द्रियों के द्वारा तीन २ इन्द्रियों के विषयों को भोगता हुआ आत्मा को अपने बश में किये हुये हैं जो सदा प्रसन्न चित्त है दुःख ऐसों के कभी पास नहीं फटकता; बुद्धि उसकी दासी हो सब काम में स्थिर के साथ लगती है और शान्ति जो सब सुख का कारण है सदैव उसे प्राप्त रहती है-कहा भी है "अशान्त स्य कुतः सुखम्" जिसे शान्ति नहीं है उसे सुख कहां:-

तीसरी अध्याय में अरजुन ने फिर पूछा कर्म से बुद्धि योग को आप श्रेष्ट मानते हो तो स्पष्ट यही न कह दीजिये कि संसार के सब झगड़े छोड़ बिरक्त हो बैठो- इसपर भगवान् कहते हैं-मनुष्य अपने बश में हो कोई काम नहीं करता किन्तु प्रकृति के तीन गुण सत्व रज-तम से प्रेरित वे बश और लाचार हो काम उस्से कराया जाता है और बिना कुछ काम किये एक क्षण भर भी कोई नहीं रह सक्ता

"नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः" ॥

सनकादिक बड़े ज्ञानीयों ने भी कर्म ही के द्वारा सिद्धु को पाया है यद्यपि हम तत्व को पा गये हैं हम सर्ब साधारण के समान लौकिक बातों का ध्यान न रक्खें और उस्पर बहुत जोर न दें तो कोई चिन्ता नहीं है न इस्से हमारे आत्मा के कल्याण में कोई बाधा पड़सक्ती है तब भी लोक संग्रह के लिये हमें सबों के साथ मिलना उचित जान पड़ता है-क्यों कि

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।

स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥

संसार का कून है जैसा श्रेष्ठ बड़े लोग करते हैं उसी के अनुसार जघन्य छोटे लोग भी करने लगते हैं-वे जिसे प्रमाण में स्थापित करते हैं सर्व साधारण भी तदनुसार वही करने लगते हैं-

"सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।
कुर्याद्विद्वांस्तथा सक्तश्चिकीर्षु र्लोकसंग्रहम्" ॥

कर्म में आसक्त मूर्ख जैसा करता हो विद्वान् भी लोक संग्रह की इच्छा रख वैसा ही करे-फिर आगे कहा है

"न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसांगिनाम् ।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन् ॥

कर्म में आसक्त अज्ञ की बुद्धि में भेद न छोड़े अपिच आप भी वे-साही करता हुआ सब काम उन्ही के समान करता जाय-हमारे देश में अपरिवर्तन शीलता Conservatisims का सूत्र पात करने वाले ऐसे ही ऐसे वाक्य हुये जिसका परिणाम यह देखा जाता है कि संशोधक लोग कितनाहीं सिर धुनते हैं पर कोई उन की नही सुनता-पढ़े लिखे सुसभ्य एक तो योंही अभी दाल में नमक से हैं संशोधन के ढंग पर चलने की चेष्टा भी करें तो उन की कुछ चलती नही—इसलिये कि अपठित समाज का मुह उन्हें जोहना पड़ता है गीता में भगवान् ने Precaution पूर्वावधान के खयाल से कदाचित् ऐसा कहा हो कि जो निपट अज्ञ है और एक राह पर लगा हुआ चला जा रहा है इतनी उस को योग्यता और समझ नहीं है कि निर्ख कर सके कि जिस राह पर वह चला जा रहा है उस से अधिक परिस्कृत वह मार्ग है जिसपर उससे चलने को कहा जाता है-परिणाम इस का यही होगा कि अभ्यसित मार्ग को तो वह छोड़ बैठेगा उस की ओर से उसको अश्रद्धा हो जायगी-दूसरे रास्तापर चलने की उस की योगता नहीं है तो "इतोभ्रष्टस्त तोभ्रष्टः" हों सर्वथा पतित हो जायगा-किन्तु यह पूर्वावधान तब के लिये कारगर था जब समाज के लोग बिलकुल गिरी दशा में आगये

थे और ना समझ थे—तालीम की बरकत से लोग अब अच्छा क्या फज़ीलत की पगड़ी बांधने का दावा बाँध रहे हैं माना की बुद्धि में भेद पैदा करने से लोग बिगड़ जांयगे तो "न साहसमना रूह्य नरो भद्राणि पश्यति" के अनुसार आदमी पहले कुछ बिना खोये नहीं सीखता—बुद्धि भेद में हानि से लाभ अवश्य विशेष है नहीं तो हम सदैव ऐसे गिरे पड़े रहैंगे—अस्तु प्रकृत मनुसः रामः—तीसरे अध्याय का यह श्लोक बहुत ही जांच के कहा गया है—

"कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढ़ात्मा मिथ्याचारः स उच्यते" ॥

दम्भ की अच्छी तस्वीर इस में उतारी गई है—ऊपर से दिखाने को इन्द्रियों का दमन किये हुये बगुला भगत बना है पर भीतर से हर एक विषयों पर मन को दौड़ा रहा है आत्मा के पहिचान से सर्वथा बिमूढ़ है ऐसे को मिथ्याचार वाला दाम्भिक कहैंगे—उसी का उलटा आगे वाला यह श्लोक है—

"यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेर्जुन।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः सविशिष्यते" ॥

जो ऊपर से देखने में महाविषयी बन्य पशुओं के सदृश है पर मन से विषय बासना से बहुतही बहुत घिनाता है न संसार के किसी विषय में आशक्त है वह उस दांभिक से श्रेष्ठ और विशेष आदर के योग्य है—अन्त में इस सब का निष्कृष्टार्थ यह श्लोक है—

"तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः" ॥

इस लिये मन से आशक्त न हो जो उचित काम है उसे करते रहो—अशक्त न हो जो कर्म करता है वह परम पुरुष को पा जाता

है-आगे भगवान् ने कई श्लोक में स्वभाव बाद को पुष्ट किया है-जिसका तात्पर्य यह है कि हम अपने आप कुछ नहीं करते सब कुछ आपही आप स्वभाव से होता जाता है किन्तु मनुष्य गर्वाभि भूत हो अपने को कर्ता भोक्ता मान रहा है-गुण और कर्म के विभाग के तत्व तक पहुंचे हुये लोग यह समझैं कि जो जिस गुण के हैं वे उसी गुण में जा रमते हैं हम उस्से निराले हैं—

"प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमुढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥
तत्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः ।
गुणा गुणेषु बर्तन्ते इति मत्वा न सज्जते ॥

भीतरी इस का जो तात्पर्य हो ऊपर से तो इस का बुरा असर देखा जाता है कि एक फिरका थोड़े से लोगों का ऐसा है जो अपने को ब्राह्मास्मि कहते हैं और नास्तिकों से बाद में दोही एक सीढ़ी कम हैं-अद्वैतबादी आधुनिक वेदान्ति शंकर मतानुयायियों का तो यह मानो मूल सूत्र है और हमारी आगे के लिये तरक्की में बड़ी बाधा डालता है-

अध्याय के समाप्ति तक यह सिद्ध किया है कि इन्द्रियों के न दमन करने से राग द्वेष बढ़कर आत्मज्ञान को वैसाही दबा लेते हैं जैसा धुआं सब ओर से छाय कर प्रकाशात्मक अग्नि को छिपा देता है—न केवल इतनाही किन्तु लोभात्मक कामना जो कभी सन्तोष को पास नहीं फटकने देती इतनी बढ़ती जाती है कि कभी पूरी होतीही नहीं-इस लिये कल्याण चाहने वाला काम रूपी शत्रु को जड़ से उच्छेद करता रहे-पर यहां इतना याद रहे कि भगवान् अनुचित कामना के लिये हमें सावधान करते हैं-फल की बासना छोड़ निष्काम कर्म को नहीं जो हमारी उन्नति का एक मात्र द्वार है

चौथे अध्याय में यह सिद्ध किया गया है कि जब २ धर्म में ग्लानि

पहुंचती है और अधर्म बढ़ता है-तब २ साधु सत्पुरुषों के रक्षा निमित्त और दुष्ट दुष्कर्मियों को नष्ट करने को तथा पुनः धर्म पथ के प्रचार करने को मैं प्रत्येक युग में अवतार लेता हूं-

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

है भी कुछ ऐसाही कि जो सर्वथा निरीश्वरवादी हैं उन की तो मैं नहीं कहता किन्तु हम लोग जिन की बुद्धि इतनी पैनी नहीं है कि ईश्वर के होने में चित्त में किसी तरह का सन्देहहो-उन्हे कुछ ऐसाही भास रहा है कि जब धर्म पथ या रास्ती की राह में कुछ चल बिचल होता है लोगों की प्रवृत्ति सन्मार्ग से उचट असन्मार्ग में होती है-तब ईश्वर कोई ऐसी घटना सुघटित करता है या स्वयं किसी रुप रंग में प्रगट होता है कि जो बिगड़ गया है उसका सुधार हो-देखा जाता है प्रत्येक देश और जाति में अनेक महात्मा धर्म शील सत्पथ के दिखलाने वाले जो प्रगट होते आये हैं सो भगवद्गीता के इस सिद्धान्त को पुष्ट कर रहे हैं- दसवें अध्याय में आगे इसी को और भी अच्छी तरह सिद्ध किया है-भगद्विभूति के वर्णन में यह अन्त का श्लोक है

"यद्यद्विभूतिमत्सत्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं ममतेजोंशसःभवम्"॥

जीवों में जिसमें औरों की अपेक्षा कुछ बिच्छित्ति बिशेष हो जो अधिक श्री मान् और अधिक ओजस्वी हो उसको अर्जुन तुम मेरे तेज के अंश से उत्पन्न जानो-फिर आगे कहा है मेरे मनुष्य शक्तिबाह्य या मनुष्यातीत जन्म कर्म को जो जानता है वह इस देह के बन्धन से छुटकारा पाने के उपरान्त फिर जन्म नहीं पाता और मुक्त में मिल जाता है-किन्तु यह जानकारी तो बिना उसकी कृपा के सर्वथा असंभव है

जिस्को वह अपनियाना चाहता है उसी में यह शक्ति और झुकावट देता है कि वह राग द्वेष छोड़ सब ओर से निश्चिन्तचित्त हो उसे जाने या जानने की चेष्टा करे धन्य है ऐसे पुरुष जिन पर उस्की कृपा है ऐसे पवित्र सफल जन्मा बहुत हुये हैं पर अब कम उपजते हैं और इस कराल काल में तो अब बहुतही बहुत कम-

"जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्तित त्वतः।
त्यक्का देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥
बीतराग भयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः"॥

आगे फिर भगवान् कहते हैं-

"ये यथा मां प्रपद्यन्ते तां स्तथैब भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुबर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥

मसल है "मान नमान मैं तेरा मेहमान" मुझ को जो जिस तरह मानता है मैं उस को उसी भाव से मिलता हूं कैसाही कोई हो मेरे चलाये मार्ग पर उसे सब भांत चलनाही पड़ता है Faith विश्वास या श्रद्धा बुद्धि मनुष्य में आने का यह श्लोक बड़ाही पोषक है- तात्पर्य यह कि नास्तिक न हो विश्वास का अंकुर मन में होना चाहिये फिर तो मज़हब का ऐसा जाल है कि इसके बाहर होना दुर्घट है सच है जो अविश्वासी Unbeliever है उस का तो अलगही कर दिया किन्तु जिसे ईश्वर परलोक पाप पुण्य के परिपाक या फल पर विश्वास है उस के लिये यहां कहा गया है कि उस तक पहुंचने के ये अनेक मार्ग हैं-कहा भी है "महानयं धर्मपथो बहुशाखश्च भारत" रहा यह कि कोई सीधा सरल और जल्द पहुंचने का रास्ता है कोई टेढ़ा पेचीदा और देर में पहुंचने का है किसी नाम रूप से उसे भजो है वही सब में उससे पृथक् कुछ नहीं है-इसी को अधिक पल्लवित कई श्लोकों में किया है आगे निष्काम कर्म को भगवान् फिर पुष्ट करते हैं-

"यस्य सर्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्जिता ।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पण्डितं बुधाः ॥

जिस के सब काम कामना और संकल्प विकल्प से रहित हैं और ज्ञान रूपी अग्नि से जिसके सब काम भस्म सात् कर दिये गये हैं जिस्में वह उसका काम बीज रूप हो फिर न रहे-उसे ज्ञानी जन पण्डित कहते हैं अर्थात् सत् असत् का विबेक जो बुद्धि का महा उत्कृष्ट गुण है उस से वह शून्य है-

"यदिच्छालाभसन्तुष्ठो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः ।
समःसिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥

बिना बहुत सा प्रयास और यत्न किये जो कुछ मिले उसे यदिच्छा लाभ कहते हैं-उतनेही से जो सन्तुष्ट है दिन रात हाय हाय करता हुआ नहीं डोंलता फिरता, जो द्वन्दातीत है अर्थात् जो सुख में फूल नहीं उठता है न दुःख मे बिकल हो जाता है; जिसे किसी से डाह नहीं है ; जो अपने कामों में कामयाबी या नाकामयावी में एक सा रहता है ऐसा मनुष्य कर्म करने पर भी कर्म के बन्धन से सदा मुक्त रहता है फिर आगे कहा है-"श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञात् ज्ञानयज्ञः परन्तप"

द्रव्यमययज्ञ अर्थात् Miterial worship पुष्पोक्षत आदि से पूजन जो यज्ञ रूप यहां कही गई है उससे ज्ञान यज्ञ अध्यात्मिक पूजन Spiritual worship ध्यान धारण आदि श्रेष्ट है-जिस पूजन का बिधान गीता की कोई अध्याय नहीं बची जिस्में नहो-इस अध्यात्मिक पूजन का बिस्तार जितना हिन्दुओं के ग्रन्थों में है उतना किसी मजहब में नही है न उतनी रास्ता ये इसकी अन्य धर्मावलम्बियों में किसी को सूझी है-जिसे इस समय ईसा के मत के मानने वाले कहते हैं कि हिन्दुओं में अध्यात्मिक कुछ हई नहीं सच तो यों है कि खान पान में छिलावट आदि हिन्दू धर्म की बुनियाद अध्यात्म ही पर है-बिद्या और उत्तम शिक्षा के लोप हो जाने से अब हम केवल लीक तो पीटते जाते है पर नीचे तक डूब कर उसका कारणयोतत्व तक नहीं पहुंचते हैं-

"तद्विद्धिप्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः" ॥

वह अध्यात्मिक ज्ञान गुरू से नम्र हो पूछने से या गुरू की सेवा टहल से आता है तत्व दर्शी ज्ञानीं जन जो प्रसन्न किये जांय तो बता सक्ते हैं—जिस्की महिमा कई श्लोक तक बराबर गाते गये हैं—और वह ज्ञान श्रद्धा रखने वाला पाता है या जो अध्यात्म्यिक विषय में लगा हुआ है अथवा वह जो दमन शक्ति संपन्न इस ज्ञान को पाय फिर परम शान्ति लाभ करता है—

श्रद्धावांल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

संशयात्मक पर गहरी चोट देते हुये अध्याय समाप्त करते हैं

"अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ।
नायं लोकोस्ति नपरो नसुखं संशयात्मनः" ॥

जो निपट अन जान हैं तथा श्रद्धा बुद्धि या बिश्वास शून्य है और संशयात्मक अर्थात् जितनी बात सब में सन्देह उसे लगा रहता है दृढ़ता से किसी एक पर जो स्थिर नहीं रहता वह नष्ट हो जाता है—खुलासा यह कि जो अजान तो है पर दावा जानकार सर्वज्ञ होने का बांध रहा है इस लिये कि निपट निर्बोध को बिश्वास और श्रद्धा होना सुगम है कहा है "अज्ञः सुखमाराध्य" निर्बोध को बिश्वास तभी नहीं होगा जब तक वह अपनी अज्ञता स्वीकार न कर अपने को बिशेषज्ञ-मानता होगा उस्पर भी संशयात्मक कहते हैं तब भला उसको नाश होने से बचने की कौनसी उपाय बाकी रही—संशयात्मक के बारे में और भी कहते हैं उस का न यह लोक बनता है न पर लोक न संशयात्मक को सुख मिलता है सच है सुख तो अधिकतर शान्ति के आधीन है जिसे शान्ति है उस का सुख के साथ नित्य सम्बन्ध रहता है संशयात्मक को शान्ति नहीं छिन भर को भी बेकरारी उससे अलग नहीं होती इसी से सुख भी उस को सपने के से खयाल रहते हैं—योग अर्थात् काम करने में कुशलता से जिसने कर्म के फल की कामना छोड़ सक्ता है ;

ज्ञान के द्वारा जो जितात्मा है संशय सब दूर हो गया है; जिसने अपने आप को पहचाना है; उस को कर्म का बन्धन अपने जाल में नहीं फसाता—

"योगसंन्यस्तकर्माणं ज्ञानसंछिन्न संशयम् ।
आत्मवन्तं नकर्माणिनिबध्नन्तिधनंजय" ॥

पांचवें अध्याय में अर्जुन फिर पूछते हैं आप कर्मों का त्याग करना कहते हैं फिर कर्म योग की भी प्रशंसा करते हैं दोनों परस्पर विरुद्ध हैं—इनमें एक जिसमें आप कल्याण का मार्ग समझते हो सो कहिये—उसपर भगवान् कहते हैं——

"सन्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ ।
तयोस्तु कर्मसन्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते" ॥

कर्म का त्याग और कर्म योग दोनों कल्याण के मार्ग हैं किन्तु त्याग से कर्म योग श्रेष्ठ है—

"ज्ञेयः स नित्यसन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति ।
निर्द्वन्द्वोहि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते" ॥

कर्म योग में लगा हुआ भी जो किसी से द्वेष नहीं करता न किसी प्रकार की इच्छा उसे है अर्थात् निष्काम कर्म में तत्पर है जो सब भांत निर्द्वन्द्व है याने सुख दुख पाप पुण्य शीतोष्ण से परे हैं; वह सदैव सन्यासी है और सुख से सब बन्धन से छुटकारा पाजाता है सच है "मन काचे राचे वृथा" "करकामनका छाड़ि के, मन का मनका फेर" इसी के आगे और साफ़ करते हैं——

" संन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः ।
योग युक्तो मुनिर्ब्रह्म न चिरेणाधिगच्छति" ॥

बिना त्याग के सन्यास अति कठिन है योग युक्त मुनि जल्द ब्रह्म को पा जाता है इसी तरह अन्त में सिद्ध कर दिया है कि त्याग से कर्म योग सब भाँत श्रेष्ठ है और इस प्रकार कर्म योग में लगा हुआ

और प्राणी मात्र में जिसे समभाव है वह सब काम करता हुआ भी कर्म के बन्धन से लिप्त नहीं होता जिन्हें पूर्ण समभाव हो जाता है वे ब्राह्मण और चाण्डाल दोनों को एक भाव से देखते हैं :—

"विद्याविनय संपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैवश्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥
इहैव तैर्जितः स्वर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः" ।

किन्तु यह समभाव उन्हीं का होता है जो परमेश्वर में तन्मय और तदाकार हैं जो अखण्ड पुण्यशाली हैं उन्हीं में यह बात आती है हम ऐसे नार्किक जीवों में किंचित अणुमात्र भी ऐसा भाव आ जाय तो कृतकृत्य हो जांय जो चेष्टा और प्रयत्न से अलभ्य है बिना उसकी कृपा के लेश के—इत्यादि थोड़ा सा हमने यहां लिखा हमारे पढ़ने वालों को यदि यह कुछ रोचक हो और ऊब न पैदा करै तो इसे हम आगे और बढ़ावें और इस चार अध्याय में अभी और बहुत से ऐसे विषय हैं जिन्हें जहां तक चाहें पल्लवित करते रहै-शेष—

दान ।

पंडित गणेश दत्त शर्मा अनूह शहर निवासी सहायार्थ प्रदत्त हम ५) धन्यबाद पूर्बक स्वीकार करते हैं—इस तरह का दान जिसकी चर्चा ब्राह्मणों के पोथी में नही की गई लोग करना सीखलेवै तो हम यह शिकायत काहे को कभी करैं कि द्रव्य संबन्धी कष्ट से पत्र अब नहीं चलाये चलता—

कृषिदर्पण ।

कृषिदर्पण श्री हेमचन्द्र मित्र द्वारा संकलित कृषि संबन्धी यह तीसरी पुस्तक हम को मिली है—इस पुस्तक में उक्त बाबू साहब ने कृषि संबन्धी कोई बात नहीं छोड़ रखा जिस की पूर्णतया आलोचना न किया हो—यह पुस्तक बहुत ही बहुत लाभदायक और पढ़ने में मनोरंजक है—

मूल्य १।)

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै ।
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २४ सं० १०।११।१२ } प्रयाग { अक्टूबर नवम्बर दिसम्बर सन् १९०२ ई० ११४

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥=)
सबों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

—:००:—

नमूने की कापी =)॥

२०-२-०३



हिन्दीप्रदीप

जि० २४ सं० १०।११।१२ } प्रयाग { अक्टूबर नवम्बर दिसम्बर सन् १६०१ ई०

निज दुःख वृत्तान्त

हम अपना दुखरोना कहां लौ गावैं-ईश्वर की दया से ज्यों त्यों कर प्लेग से छुटकारा पाया सपरिवार अक्षत शरीर और क्षेम कुशल से प्लेग के दिनों को बिताय डाला-परमात्मा की यह थोड़ी दया नहीं है जब कि नगर के बहुत थोड़े घराने होंगे जो निर्विघ्न रहे हम लोगों में किसी का बारतक न बाका-अस्तु एक विपत्ति से छुटकारा पाया था कि दूसरी ने आघेरा हमारे आंख की ज्योति जाती रही कई दिनों तक आंख बन्द किये भीत से पड़े रहे-हमारे लिये मानो यह समस्त जंगम जगत् शून्य और निर्जीव था—मनुष्य के शरीर में नेत्र कैसा भारी रत्न है इसकी परख हमें तभी हुई-सिविल सर्जन डाक्टर ओब्रैन साहब असिस्टेन्ट सिविल सर्जन बाबू नीलरत्न बनर्जी को अनेक धन्यवाद है ईश्वर उनका भला करे जिन्हों ने बड़ी सावधानी पूर्वक हमारे नेत्रों की चिकित्सा की और हमारे नेत्र खोले-मालूम होने

लगा मानो सुख संचार का एकमात्र प्रसार इस संसार में हम फिर से जी उठे और निरन्तर विषाद में पड़े रहने के उपरान्त सहसा हमारे हर्ष की सीमा न रही—उपरान्त कई महीनों तक डाक्टर साहब नेत्र से किसी प्रकार का काम लेने को मना करते रहे—हमारा पढ़ना लिखना सब बन्द था; मनोमन पछताते थे और भगवान् से प्रार्थना करते थे कि कभी वह दिन आवेगा कि हम अपने रसिक पढ़ने वालों से फिर भी आ मिलेंगे—अनुग्राहक ग्राहक आज वह दिन आया है कि हमारी वह चिर चिन्तित अभिलाष पूरी हुई—हम कुछ शिथिल भी हो गये थे कि चलो अच्छा भया बड़ी बला कटी अब हमारा अस्तही होना उचित है—किन्तु हमारे थोड़े से प्रेमी पाठकों का बार २ का तक़ाज़ा हमें चुप न पड़े रहने दिया और अपने प्रकाश के लिये हमें पुनः प्रयत्न करनाही पड़ा; हम थोड़ा जुग जुगा तो उठे हैं किन्तु देखैं कै दिनों के लिये—किस काम का यह दुःख जीवन "नकटा जिया बुरे हवाल"—

लोकेषणा

यह लोकेषणा निपूती न जानिये क्या २ कर गुज़री है; बड़े २ सिद्ध तापस योगीश्वर ऋषि मुनि को भी इसने अपनी तपस्या, योग साधन, शान्ति, दान्ति, से च्युत और भ्रष्ट कर ऐसे अन्धकूप में जा गेरा कि वे लोकेषणा के जाल में यावज्जीव के लिये फँस रहे—अपना मान और प्रतिष्ठाही का खयाल मात्र जल में तूम्बी सा उतराता हुआ बच रहा—जो कुछ साधन और तपस्या अब उनमें है उस सब का उद्देश्य यही है कि हम संसार में सर्वोपरि माननीय पूजनीय रहैं—किसी का उद्देश्य रहता है कि हम एक मत या पन्थ कायम करें; लाख दो लाख करोड़ दो करोड़ आदमी हमारे मत पर चलने वाले हो जांय और हम उनके बीच अवतार या नबी समझे जांय—हमारे उपरान्त हमारी गद्दी पुजै, हमारी मूर्तिस्थापित की जाय, हमारी फोटो या प्रतिकृति की भी हमारे उपरान्त वैसीही इज़्ज़त की जाय जैसी जीते जी हमारी इस समय की जाती है—किसी की ख़्वाहिश रहती है कि गवर्नमेंट के बड़े से

बड़े कर्मचारियों तक हमारी रसाई हो और कर्मचारियों की हाँ में हाँ मिलाते हुये हम अपनी अन्धी समाज में सर्वजन हितैषी समझे जांय; चाहो हमसे कभी एक साधारण पुरुष का भी कुछ उपकार न हुआ हो पर हम देश हितैषियों में अगुआ Public spirited कहलाये जांय—कविवर विशाख दत्त रचित मुद्रा राक्षस के इस श्लोक को जागरूक रहते हुये हमारे पबलिक् स्पिरिटेड महाशय की यह कैसी भूल है—

"नरपति हितकर्ता द्वेष्यतां जाति लोके जनपदहितकारी त्यज्यते पार्थिवेन्द्रैः। इति महति विरोधे विद्यमाने समाने नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्ता"॥

राजा और प्रजा दोनों की हानि और लाभ का मुकाबिला जब किसी एक विषय में आ पड़ता है तब जो मनुष्य राजा का हित चाहने वाला होता है प्रजा उसे नहीं चाहती और जो केवल प्रजा का हितैषी होता है उसे राजा त्याग देता है—उसकी कोई कदर राजा की नज़र में नहीं रहती—इस तरह के विरोध और स्पर्द्धा Competition में ऐसा पुरुष दुर्लभ है जो राजा प्रजा दोनों को प्रसन्न रख और दोनों का जी अपनी मूठी में रख काम करे—और वह तभी हो सकता है जब अपने महत्व का अनुरागी न हो लोकैषणा में न फँस शुद्ध पर उपकार यज्ञ की दीक्षाही को अपने जीवन का मुख्य फल मानने वाला हो—निज महत्व की बासना हटा ली जाय तब यह लोकैषणा भी जो अभी विषतुल्य है अमृत फल की फलने वाली हो जाय—उस समय यह एक ऐसा साधन हो जाती है जो साधक के लिये योग सिद्धियों से अधिक है—जैसा पक्का योगी योग सिद्ध होने पर अणिमा आदि सिद्धियों को लात मारता है वही कच्चा योगी उन में फँस योग से भ्रष्ट हो अपनी जन्म भर की कमाई खो बैठता है—जिन को सच्चा देश का अनुराग नहीं है उनको यह लोकैषणा कच्चे योगी की भांत वास्तव में लोकैषणा ही मात्र है और जिस की अवधि केवल अपना महत्व सम्पादन मात्र है—जिनमें सच्चा देश अनुराग और जाति वात्सल्य हैं वहां पक्के योगियों की भाँत यह भी यावज्जीव

चिरस्थायी रहती है–बंगाल के विद्यासागर महाशय में इस का सच्चा रूप झलकता था; जो लाट साहब की कौंसिल के मेम्बर होने पर नंगे सिर पाव में स्लीपर और देशी कपड़े की डूट्टर ओढ़ लाट साहब के बराबर बैठने में अपना महत्व मानते थे; और अपने देश बंगाल के लिये ऐसे २ काम कर गये जिसे वहां के लोग कदाचित् कई शताब्दी तक न भूलैंगे–मनु ने इसी से लिखा है कि अपमान को अमृत के समान माने और लोगों में अपनी प्रतिष्ठा और मान को बिष समझ सदा उस से बचता रहे–ऊंची पदवी और ऊंचा दरजा कभी अप्रिय नहीं है; किन्तु उच्च पद पर पहुंच जो हम उस उच्च पद के रंग में रंग गये और उस की प्राप्तिही को अपने जीवन का सर्वस्व मान बैठे तो बस हो चुका–उद्देश्य हमारा मनसा बाचा कर्मणा अपने देश की सेवा का हो प्रसंगात् खेलौना में हमें बिना प्रयत्न के उच्चपद ऊंची उपाधि या खिताब भी मिल जाय तो इनकार नहीं--ग्लैडस्टोन साहब जीवन पर्यन्त अपने को मिस्टरही लिखते रहे यद्यपि स्वयं वृटिश राज्य के प्रधान मंत्री हो न जानिये कितनों को बड़ी से बड़ी उपाधियां देदी होंगी–सच तो यों है कि जब तक हम गवर्नमेंट के मुख प्रेक्षी और कर्मचारियों की प्रसन्नता को महा प्रसाद समझते रहैंगे हम कभी अपने देश की किसी तरह की चिरस्थायी भलाई Substaneial good न कर सकैंगे–इससे हमारा यह मतलब नहीं है कि हम अपने राजा का विरोध करैं किन्तु सर्वतो भावेन उस की आज्ञा पालन में प्रबण चित्त रहैं–हां अपने लोगों की हानि कर राजा तथा राजकर्मचारियों को केवल आत्म प्रतिष्ठा के लिये प्रसन्न न करैं–जैसा कितने इस दिनों कोढ़ में खाज से हमारे बीच हैं–सच तो यों है कि इस लोकैषणा की ओर से बेपरवाही कुछ यहीं की धरती और यहीं की आबो हवा में है–बड़े २ श्रीमन्त राजा महाराजा उन पहले के महर्षियों की कितनी सेवा टहल में तत्पर रहते थे पर उन ऋषियों को इनकी कभी कोई परवाह नहीं रहती थी–शकुन्तला नाटक में दुष्यन्त जब कण्व के आश्रम में गया उस समय का उसका बिनीत बेश और विनीत भाव लक्ष्य के योग्य है–इसाई मत में तो कहीं इस प्रकार के त्याग का अंकुर भी नहीं है न उस मत के मानने वालोंहीं में यह पाया जाता है इसकी प्रसवभूमि यह जीर्ण भारतही है–

हम लोगों में जो इस लोकेषणा पिशाची का प्रकाश हुआ सो बिदेशियों के सम्पर्क और उन की हुकूमत का नतीजा है—अधिकतर इस ज़ाहिरदारी को पहले पहल हमने मुसल्मानों से सीखा उपरान्त अंगरेज़ महाशयों से इसे हम सीख रहे हैं—जिस की इन दिनों बहुत तरक्की देखी जाती है—बिगड़ने पर सब बात बिगड़तीही जाती है लोकेषणा जो एक तरह पर गुण था अब दोष हो गया, लाचारी है—

दृढ़ संकल्प या स्थिर अध्यवसाय

इसे दृढ़ संकल्प कहो या अपने इरादे का पक्का होना मानो निःसन्देह आदमी में यह एक ऐसी बड़ी सिफत है जिसे हम मरदानगी या यावत् पौरुषेय गुणों का निष्कर्ष या सारांश कहैं तो अनुचित न होगा—वेद के समय के हमारे ऋषियों का ऋषित्व; पुराने ब्राह्मणों में ब्राह्मणत्व या ब्रह्मतेज; पहिले के क्षत्रियों का क्षात्रधर्म भी यही था; जिस के ज़ोर से उन्होंने वे काम कर डाले हैं जो अब इस नूतन सभ्यता के ज़माने में निरी पुराणों की गप्प कही जाती है; शिक्षित समाज जिसे अप्राकृतिक मान सर्वथा हेय और झूठ मानती है तो लाचारी है—पर इतना यह अवश्य कहेंगे कि इसी दृढ़ संकल्प का रूपान्तर तपोबल भी था जिस्से यहां के भारतीय आर्य सन्तान मानुषी सृष्टि मात्र में किसी समय सर्व श्रेष्ठ ओर सर्व मान्य थे—अन्य देश वाले इस तपो बल का नाम तक नहीं जानते; यह अद्भुत शक्ति केवल यहांही के लोग दमन के द्वारा अपने में उपार्जन करते थे—जिस के खो देने से अब इस समय हम निःसत्व और सब भांत निकम्मे हो गये—जिसे हम इस समय जातीयता Nationality कहते हैं उन प्राचीन आर्यों में उस का स्थायित्व या सहाड़ा यही तपो बल था—

जो अपने इरादे के पक्के हैं उन्हें कोई काम दुष्कर नहीं है—मनुष्य के चित्त में सैकड़ों भाव उठा करते हैं साधारण निकृष्ट लोगों को एक मिनिट के लिये भी उन २ भावों पर स्थिरता नहीं रहती किन्तु जो बड़े लोग हैं जिनका बड़प्पन जग उजागर है और जन समाज में आबाल वृद्ध बनिता मुक्तकण्ठ हो जिसे स्वीकार कर रही है उनमें अपने मन्तव्य

सिद्धान्त का दृढ़ होनाही बड़प्पन है—राजनीतिज्ञ प्रवीण राजपुरुष Politician में यही राजनीति पटुता Statesmanship है—जो राजपुरुष अपने इरादे का पक्का न हुआ वह बोदा दुर्बल चित्त क्या किसी का शासन कर सकेगा—हमारे भूतपूर्व लाट साहब सर ऐंटोनी मेगडानेल हिन्दी अक्षरों को यहां की अदालतों में जारी होना उचित और न्याय समझ मन में ठान लिया फिर कितनाही इसके प्रतिपक्षियों ने सिर धुना एक न किसी की चली उसे करी होला—जंगी फौज के सिपहसालार की परख तभी है जब चारो ओर से दुश्मनों की फौज ने आ घेर लिया किसी दुर्ग भूमि या किले में बन्द शत्रु के दल से सब ओर से घिरा हुआ चपकुलिश में पड़ा हुआ है; फौज़ के सिपाही अलग कुड़मुड़ा रहे हैं बड़े२ सरदारों के हांथ पांव फूल गये कुछ करते धरते नहीं बनता; सबों ने निश्चय कर लिया कि अब अवश्य शत्रु के हस्तगत होंगे; जन्म भर के लिये क़ैदी होना पड़ेगा और हार का लील का टीका माथे पर सदा के लिये लगा—किन्तु जो सिपहसलार अपने मत का दृढ़ और सिद्धान्त का पक्का है वह कभी नहीं अपने को शत्रु के समर्पण yield करता और अन्त को बिजयश्री आप से आप आय के उस की दासी होती है—इसी को "मंत्रं वा साधये देहं वा पातये" कहते हैं—यातो किसी काम को आरंभ न करे आरंभ किया तो जब लो उसे पूरा न कर डाले बीच में छोड़ उस से निरस्त हो न बैठे; उसे अधकचड़ा छोड़ बैठ रहना कायरों का काम है—राजर्षि भर्तृहरि के नीति निरत इस सिद्धान्त पर जो आरूढ़ रहते हैं उन को सिद्ध की शोभन मूर्ति का दर्शन अति सुलभ है——

"प्रारभ्यते न विघ्नभयेन नीचैः प्रारभ्य विघ्नविहता विरमन्ति मध्याः। विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः प्रारभ्यचोत्तमजना न परित्यजन्ति" ॥

आलसी अनुद्यमी बिघ्न के डर से किसी काम को पहलेही से नहीं आरंभ करते जैसा अरण्यचारी पशु हरिण आदि चर डालेंगे इस भय से खेती करनाही नहीं—हमारे देश में धनी काम न चला तो ब्याज का

घाटा सहना पड़ेगा इससे किसी काम करने का साहस पहलेही से उन में नहीं होता—मध्यम श्रेणी वाले आरम्भ तो करते हैं किन्तु बिघ्न होने पर सकुचाय के बैठ रहते हैं-श्रेष्ठ जन उत्तम श्रेणी वाले जो आरम्भ करते हैं उसे बिना पूरा किये नहीं ठहरते दृढ़ संकल्प मनुष्यों के ऐसेही लोग नमूना हैं—हमारे पुराने आर्यों ने अलग २ बहुत से देवी देवताओं में बिघ्न बिनाशक विघ्न राज गणेश को इसी लिये मान रक्खा है जिस में उन के दृढ़ सकल्प में त्रुटि न हो-आरम्भ में गणेश का स्मरण नहीं है इस बात से अपने को चैतन्य करना है कि देखो अपने संकल्प में दृढ़ रहो अपने को कृत्तकार्य न होते देख उदास हो मुह मोड़ बैठ न रहो; किन्तु धीरज धरे जिसे तुम ने आरम्भ किया उस में लगे रहोगे तो कितनाही विघ्न होता रहे अन्त को अवश्यमेव कृतकार्य होगे-सच पूछो तो धैर्य दृढ़ संकल्प का बड़ा सहकारी है; जो धीरज वाले हैं उन में बहुधा अपने विचार की दृढ़ता देखी गई है-झुझलाहट क्रोध या तामस जो क्षुद्र जनों की मानो मीरास है उनका स्पर्श भी कभी उन के चित्त में नहीं होता गंभीर भाव साधारण किये शान्त शील बने रहते हैं-न्यूटन महाशय का डयमन्ड कुत्ता न जानिये कितने दिनों के परिश्रम को उन कागज़ों के नष्ट करने से व्यर्थ करदिया; हमारे इस समय के साहब लोग होते तो शायद कुत्ते को क्रोध में आय गोली मार देते पर न्यूटन साहब डयमन्ड पर ज़रा भी न झुझलाने और उसी क्षण से फिर उन २ वैज्ञानिक विषयों को पुनः अनुसन्धान करने लगे जिन्हें उन्होंने चिरकाल के परिश्रम द्वारा सिद्ध कर रक्खा था—इसी तरह प्रतिक्षण की साधारण घटनाओं पर हमारा चित्त कभी आन्दोलित नहीं होता न्यूटन के लिये वृक्ष से फलपात अनेक तर्क वितर्क का हेतु हुआ और अन्त में Attraction of gravitation के निकालने का मूल हुआ-अर्थात् पदार्थों में एक ऐसी आकर्षण शक्ति रहती है कि छोटी बस्तु बड़ी को अपनी ओर खींचती है जिससे पृथ्वी चन्द्रमा आदि ग्रहों का अपनी २ कक्षा में घूमना दृढ़ रीति पर सिद्ध हुआ—इसी तरह जेम्स वाट ने डेग के ऊपर के ढकने को हीलते देख भाफ में कितनी शक्ति है सो प्रगट किया जिससे अनेक बाष्पीय यंत्र जहाज़ रेल

इत्यादि चल रहीं हैं और प्रति वर्ष भाफ की ताकत के विस्तार की तरक्की ही यूरोप के वैज्ञानिक करते जाते हैं-इसी तरह एक ने छत से लटकते लैम्प को देख घड़ी का पेंजुलम निकाला इत्यादि वैज्ञानिकों की अनेक ईजादें इसी दृढ़ता का परिणाम है-इत्यादि इस दृढ़ता के सम्बन्ध में बहुत कुछ हम पहले के अङ्कों में लिख चुके हैं इससे पिष्टपेषण समझ इसे समाप्त करते हैं-

हिन्दू जाति का स्वाभाविक गुण

गीता में भगवान् कृष्ण चन्द्र ने गुण कर्म के विभाग पर बड़ा ज़ोर दिया और सिद्ध कर दिया है कि मानव जाति का बनना बिगड़ना सत्व रज तम इन ३ गुण और सात्विकी राजसी तामसी इन ३ प्रकार के कर्म पर निर्भर है-इन्ही गुण कर्म के विभाग के अनुसार हमारा यह लोक और परलोक दोनों बनता और बिगड़ भी जाता है-इन्हीं बातों पर लक्ष्य कर आज हम हिन्दुओं का स्वाभाविक गुण अपने पढ़ने वालों को दरसाया चाहते है-इसमें सन्देह नहीं हिन्दू जाति में अब भी अधिकतर लोगों में स्वाभाविक सरलता सिधाई आर्जव आदि देख; या चाहो यों कहिये इनमें जैसा गाढ़दीपन है; उससे यही बोध होता है कि स्वभावतः इनकी सात्विक प्रकृति है-प्रारंभ में जब इन का पूरा अभ्युदय था और जिस समय इस भूमण्डल पर केवल यही यही थे आस पास के जितने देश और उन २ देशों के रहने वाले जन समूह याता नितान्त असभ्य और वन्य थे या किसी जनपद के निवासी कुछ मनुष्यत्व अपने में रखते थे तो बहुधा तो उनमें तामसी प्रकृति के थे असुर राक्षस दस्यु दानव गन्धर्व किन्नर या किंपुरुष उपाधि धारी हुये-सात्विक प्रकृति किसी २ में कहीं लेश मात्र को पाई गई-इस बात के साक्षी पुराणों के अनेक इतिहास कथानक और किम्वदन्ती हैं पुराण ही क्या वरन संहिता और ब्राह्मण भाग की अनेक गाथायें भी इस में प्रमाण हैं-इस से तो लाचारी है कि हमारे नई तालीम वाले अपने नये इल्म के जोश में बिना कुछ सोचे समझे सहसा कह डालें कि वह सब गप्य कवि या ग्रन्थकर्ताओं के मस्तिष्क की कारीगरी; किस्से

कहानियां Fictions दन्तकथायें या पढ़े लिखे लोगों के दिल बहलाव हैं किन्तु तले तक डूब के खोजते रहो तो यही पता लगता है कि यहां की पुरानी आर्य्यजाति जो अब हिन्दू के नाम से विख्यात हैं चरित्र की कसौटी में सात्विक वृत्ति का वैसाही एक उदाहरण हैं जैसा प्रतिभा, धारणा शक्ति; बिचार शक्ति, आदि मानसिक व्यापार Mental faculties में इस धरातल पर अनुपम और अप्रतिद्वन्द्वी हैं–इनकी कुशाग्रबुद्धि "शाणोल्लीढ" खराद पर चढ़ कहांतक तीक्ष्ण हो सकी है यह एक नहीं बरन बीसों बार के "कंपिटीशन" Compition संघर्ष में सिद्ध हो चुका है--जहाँ प्रतिस्पर्द्धियों के मुकाबिले ये आगेही बढ़े देख पड़े–इनके और २ उत्तम गुणों की समालोचना आगे चल के करैंगे पहिले इनकी धर्म भीरुता का विचार करते हैं–हम से कोई अधर्म न बन पड़े जिसमें हमारा परलोक विगड़े और ईश्वर का कोप हमारे ऊपर आवे इन के अकुटिल सरल चित्त में प्रतिक्षण इसका ध्यान रहता है और यह खयाल इतना पोढ़ा पड़ गया है और इतनी मज़बूती के साथ इसने जड़ पकड़ लिया है कि किसी तरह उखाड़े नहीं उखड़ता–परिणाम में ये अनेक सुखद पदार्थों से बंचित रह जाते हैं परलोक में उसके सेवन या धारणा से बाधा होगी इस लिये उन पदार्थों को बरकाते हैं–कितने खाद्य पदार्थ हम लोगों में जो अखाद्य मान लिये गये हैं उसका कारण यही है कि कितनी वस्तु जो सात्विक नहीं हैं इसलिये उन के भोजन पान या सेवन से हमारी बुद्धि पर तामसी असर पड़ेगा बुद्धि में जब तमो गुण आया तब कौन सा अकार्य करने को बच रहा और अकार्य बन पड़ा तब यह लोक परलोक दोनों में कुगति होने में क्या कसर रही–यह सब खयाल कर कितनी चीज़ों का भोजन और पान तो दूर रहे उनका स्पर्श भी ये बचाते हैं–भारत भूमि की सीमा के बाहर रहने वाली जाति में ऐसे निन्दित घृणित पदार्थों का पान भोजन सेवन देख इन्हें घिन हुई और उन्हें ये म्लेच्छ कहने लगे; पीछे इन्हीं म्लेच्छों का दल बढ़ता गया और भारत के आक्रमण के उपरान्त इतना घिष्ट पिष्ट यहां के लोगों का उनके साथ बढ़ गया कि ये भी अनेक अनेक आचरणों में उनके सदृश हो अपने को आध्यात्मिक विषय में नीं–

गिरे देख भी अन देखी कर गये और करते जाते हैं-उन गिरे हुओं का समूह प्रतिदिन अधिक होता गया और होता जाता है जो शुद्ध आचार के बचे हैं उन बेचारों पर मूर्खता, अत्याचार, दीनबातिली Superstitious का दोष आरोपित किया जाता है-समय का प्रभाव तो है जो गुण था वह दोष मे शामिल किया गया-हमारी समझ में गुण जो इनमें दोष हो गया उस का यही कारण मालूम होता है कि ये धर्म वृक्ष के मूल को सींचना तो भूल गये डाली और पत्तों को सींचने लगे-परस्पर की सहानुभूति, अपने देश और जाति का अनुराग, स्वत्व रक्षा स्वत्वाभिमान, आदि मूल सेचन था सो सब न जानिये कब से छोड़ बैठे; खान पान और आचार विचार की छिलावट के प्रचार संचार में पड़े सड़ते हुये बैठे रहे-जिन से ये घिनाते थे वे इन्हें लात मार इनके प्रभु और शाशन कर्ता बन बैठे-यहां तक शान्ति और धर्म भीरुता ने प्रभु शक्ति और मुल्की जोश की अग्नि को इनमें प्रशान्त कर दिया कि सर्वथा दास दीन हीन पराधीन हो "कोउ नृप होहि हमे का हानी-चेरी छोड़ न होउब रानी"-को पढ़ते हुये सन्तोष कर बैठ रहे—अब दूसरी बात इन्द्रिय निग्रह या दमन उसकी समालोचना करते हैं-अनेक तामसी भोजन को जो इन्होने बचाया उस का एक यह भी कारण था कि पतंजलि के योग सूत्र "आहारात्सत्वशुद्धिः" के अनुसार तामसी बस्तु के सेवन से निग्रह की कौन कहे इन्द्रिय चांचल्य बहुत अधिक बढ़ जाता है-धर्म शास्त्र बालों ने दो तरह की पवित्रता कहा है बाहरी और भीतरी और इन दोनों तरह की पवित्रताओं का बड़ा विस्तार किया गया है-अन्त को बाहरी पवित्रता पर विशेष ज़ोर न दे जैसा "नवारिणा शुध्यति चान्तरात्मा" इत्यादि अनेक वाक्य पाये जाते हैं भीतरी पवित्रता से आभ्यन्तर शौच को मुख्य माना है-यह आभ्यान्तर शौच और है क्या? यही आत्म दमन—विदेशी जन जो हम को हर एक बात के सिखलाने का दावा बान्ध रहे हैं उनके यहां बाहरी सफाई की कितनी अधिक तरक्की है पर भीतरी सफाई में कुछ भी नहीं-पादरी साहबान जुदाही तान भर रहे हैं कि हिन्दुओं में "मोरालिटी" दमन शिक्षा हई नहीं और वह केवल इसाई धर्म के द्वारा प्राप्त हो सक्ती है

ज़रा इस घमण्ड और बिकत्थन पर ध्यान दीजिये और उनके मत की जो कुछ पूंजी या मूल ग्रन्थ अथवा दमन सामग्री उन के धर्म में है उसे टटोलिये–हमारे यहां षट् दर्शनों में एक पातंजल दर्शन है जिस्में योग का अन्तिम निचोड़ इस दमन शक्ति का प्राप्त करनाही है–जिसका आधे के लगभग केवल यम नियम के विवरण में है और अन्त में इस बात को सिद्ध कर दिया है कि उन यम नियम के अभ्यास से इन्द्रियों का निग्रह होता है–निग्रहीतेन्द्रिय अपने चंचल मन को स्थिर कर चित्त की वृत्तियों के निरोध से परमात्मा में मन लगा सक्ता है—इन सब बात से यह बिलकुल स्पष्ट है कि हमारे हिन्दू कितना दमन की ओर प्रवण चित्त थे–किन्तु! अत्यन्त पछतावा और महा दुःख होता है कि विजातियों का घनिष्ट संपर्क पाय ये कितना बिगड़ गये और इनके सात्विक स्वभाव और गुणों में बराबर कमी होती आई–अब जो ये इतने नराधम और अपाहिज हो गये यह सब उसी घनिष्ट संबन्ध का फल है-परिणाम में चिर संचित अपने पूर्वजों की पूंजी भी गवाय बैठे यवनानुयायी हो सर्वथा पौरुषेय गुण विहीन हो गये–ज़रा २ सी बातों के लिये दूसरे का मुह जोहते हैं–विषलता के समान अकर्मण्यता सब ओर छाय भारत की उर्वरा भूमि को ऐसा छेंक लिया और जहां इतना विस्तार इसने पाया कि उद्यम, साहस, आत्म गौरव, जातीयता-भिमान, उत्तेजना आदि पौरुषेय गुण जो आत्म दमन के सहकारी और सदा साथ २ रहने वाले हैं उन के बीज को अब बोने का कहीं अवकाश ही न रहा–जैसा आधुनिक विज्ञान प्रकृति के परिवर्तन और उसे नष्ट भ्रष्ट करने में बज्रापात सा हुआ वैसही पश्चिमी सभ्यता हिन्दुओं के आत्म दमन मे डिनामइट के सदृश तहस नहस करने वाली हुई–यों तो इन्द्रियां अपने २ ढंग पर सब प्रबल हैं पर दो बड़ी प्रबल हैं काम बासना और रसना–क्योंकि कहा भी है "जितं सर्वं जिते रसे" रसना को जीत लेने से सब इन्द्रियां आप से आप वश में हो जाती हैं–मुसलमानों के अधिक संपर्क से उनकी सी भोगलिप्सा हमारे में बढ़ गई; न जानिये कितने हिन्दू यवनी के प्रेम में आसक्त हो अपने बाप दादा का धर्म

छोड़ खुला खुली मुसल्मान हो गये-मेरे मन में ऐसा आता है कि तीन चौथाई मुसल्मान जो अपने मत को बदल हिन्दू से मुसल्मान हुये हैं ऐसेही हैं—इतने तो प्रगट रीति पर खुला खुली हो गये और गुप्तरीति पर तो मैं समझता हूं न जानिये कितने होंगे जिन्हें उनके यावनिक आचरण बोल चाल रहन सहन अर्बी फारसी के पढ़ने पढ़ाने से हम इन्हें अर्द्ध यवन कहें तो अनुचित न होगा—

अस्तु यवन तुल्य होने पर भी संस्कृत हिन्दी के प्रचार का सर्वथा लोप हो जाने से और मुसल्मान बादशाहों के अत्याचार के कारण वैदिक धर्म केवल आभास मात्र को बच रहा केवल ब्राह्मण मण्डली वेद शास्त्र का पठन पाठन करती रही—उत्तम वर्ण के कुलीन घरानोंमें वैदिक धर्म दीपक की ज्योति सा कहीं फिर भी टिमटिमाताही रहा किन्तु आस्तिक्य बुद्धि और धर्म पर श्रद्धा जो यहां की आबोहवा में छाया हुआ है और जो हिन्दू जाति में स्वाभाव सिद्ध है उसे जब वैदिक धर्म का सहारा न रहा तब निकृष्ट वर्ण के लोगों में कोई २ ऊँचे घरानों में भी पीर पैगम्बर पुजने लगे आधे से अधिक ने अपने को पचपिरिया कर डाला आभास मात्र को हिन्दू कहलाये—उपरान्त ब्रिटिश शासन के इस उग्र-वैभव में और अंगरेज़ी शिक्षा के प्रबल प्रताप से उस श्रद्धा बुद्धि में भी बड़ा भारी धक्का लग गया—मज़हब अब कोई चीज़ न रहा; आज़ादगी लोगों में ज़्यादा पसन्द आने लगी; अभी तक तो रसना इन्द्री का पूरा निग्रह था; प्रत्येक बात मुसलमानो की ग्रहण कर लिया था पर खाने पीने में उनका साथ बड़ी सावधानी से बचाते रहे—अब तो उसमें भी "सबै भूमि गोपाल की यामे अटक कहा-जाके मन में अटक है सोई अटक रहा-"तिसमें भी पान दोष तो इतनी तरक्की कर रहा है जैसा किसी समय आर्य जाति में सोमपान की तरक्की रही-दूसरे विलाइत की अङ्गरेज़ी चीज़ों की नफासत आशाइस और आराम ने रजोगुण का इतना विस्तार देश में कर दिया कि यहां के लोगों की शुद्ध बेबनावटी प्रकृति Simple habits में बनावट जिसका अंकुर मुसलमानी राज्य में पड़ चुका था अब बहुतही बहुत बढ़ गया—जब तक देश में धन भरपूर था सब लोग खुश खुर्रम और रँजे पुंजे थे यह ऊपरी बनावट भी शोभा

देतीथी अब निरी बनावट केवल आडम्बर मालूम होता है "सिद्धि रही सो गोरख लेगये—खाक उड़ावें चेले—"हर एक बात की आशाइस और आराम तथा ब्रिटिश राज्य का स्वास्थ्य पाय उचित था कि हम आगे बढ़ने के लिये चेतते सो गहरी नींद में सोना अपने लिये कल्याण और सुख मान बैठे—हिन्दू समाज की अनेक प्रचलित बुराइयां जो यवनों के अत्याचार के कारण हमारे में Hereditary कुल क्रमागत की भांत हो गईं थीं उचित था कि सोच समझ उन का संशोधन कर डालते सो उस में परिवर्तन अपने बाप दादों की हेठी और अपनी सपूती के विरुद्ध समझ बाल बराबर भी उस सुगणवर्त्मा से इधर उधर नहीं हटा चाहते—सभ्य बनने को बहुत सी बुराइयां अलबत्ता हमने ग्रहण कर लिया—अस्तु जो हो हमें यह देख थोड़ा सन्तोष अवश्य होता है कि संपूर्ण आबादी का छठवां हिस्सा अब तक यहां ऐसा है जिन में शुद्ध आर्य क्रम अब भी पाया जाता है; अहो भाग्य यदि अंगरेज़ी शिक्षा का प्रभाव न हो इतना भी बना रहे—

हां भैया बाह भैया

पाठक इस भूमण्डल पर कौन ऐसा होगा जिसे वशीकरन महामंत्र के जानने की इच्छा न होगी प्रायः मनुष्य मात्र को यह अभिलाषा रहती है कि ऐसा कोई मंत्र यंत्र किसी कामिल फकीर से हाथ लग जाय तो क्याही अच्छा हो—तब फिर क्या अमीरों के जितने नौजवान नई उभाड़ के पट्ठे मिलैं सबों की नकेल अपने हांथ में रक्खैं—या तो रसिक शिरोमणि भगवान् कृष्णचन्द्र किसी समय नटवर नट नागर की उपाधि धारी थे या अब इस समय हमारे ये नवयुवक नये पट्ठेही अपने को सब गुण आगर नट नागर माने हुये हैं—किन्तु मैं उस फकीरी लटके के बदौलत उनका भी पूज्यपाद गुरू बनता और नगर की रंभा मेनका सी रूपगर्विता बार विलासिनियां तथा इन नट नागरों को हार में सूत्र के समान एक में पिरोह "नायकमणि" सुमेर हमी बनते और कठपुतली की तरह उन से जैसा चाहते वैसा नाच नचाते—इन नये पट्ठों की क्या पुराने खुर्राट दिवालियों के भी नाक के बाल हमी बनते--परन्तु वही कहावत आगे

आई "काहे को नौ मन तेल होगा काहे को राधा नाचैंगी" फकीरों की कितनी सेवा टहल कीजिये जन्म भर उनकी लंगोटिया धोते रहिये वे काहे को कभी पसीज सकते हैं–फकीर साहब भी सिवा लड़का देने वाले मंत्र के और कुछ कदाचित् जानते भी न होंगे और वह मंत्र केवल स्त्रियोंही के कान में फूकने का है पुरुष लोग तो सर्वथा उसके लाभ से बंचित रह जाते हैं–अस्तु फकीरों से तो यह लटका पाने की ओर से निराश हो बैठे पर इसकी खोज में लगेही रहे और हैरान परेशान थे कि कहां उसे पावें–अन्त को मैं रईस महाजन नये फेशन वाले जेंटिलमेन की दरबारदारी करने लगा और वहां देखा तो एक दिन खुश पोशाक खुश मिजाज़ ज़र्कबर्क बाबू साहब चमन में बैठे चोहल के ढंग पर बोल उठे– "क्यों जी मिट्ठू मल उस दिनके जशन में मैंने जो लतीफे कहे थे तुम तो उसे समझगये थे न? क्यों कैसी बहार देखने मे आई"?–

मिट्ठू—हां भैया खूबही छपायेउ छट्टी का दूध याद आया होगा होंठ चाटने लगा–वाह भैया——

क्यों जी खां साहब आप की क्या राय है—

खां साहब--हां भैया--भला आप के तर्ज़ गुफ़्तगू को कोई कभी पा सक्ता है--वल्लाह मैने तो इस अन्दाज़ का खुश गुफ़्तार कहीं नहीं पाया बड़े२ अमीरों का दरबार किया पर यह कुछ ढंगही निराला है--अच्छा फिर भैया साहब आप हैं भी तो रईस आज़म वाह भैया क्या कहना--

मैं लटके की तलाश में तो थाही चुपके उठ वहां से चंपत हुआ और सोचने लगा बस यही बड़ा उमदा लटका है अब मैं भरपूर अपने मकसद् को पहुंच जाऊंगा--मन में आया चलो बाज़ार से होते चलूं चेहल कदमी हो जायगी कोई दोस्त मिल गये तो उनके साथ गपशप में थोड़ा दिल बहलाव तो कहीं गयाही नही--रास्ते में जहाँ कहीं कोठों के नीचे तम्बोलियों की दूकान मिलती मैं वहां ठहर जाता और कान लगाय छैलों की बातें सुनने लगता तो वहां भी "हां भैया वाह भैया" की मार मारें सुन पड़ीं--अब तो मुझे पूरा विश्वास हो गया बस इससे

बढ़कर वशी करण और कुछ नहीं है०-मैंने एक बात बड़े प्रभाव की इस मंत्र में और देखा कि जो इसके उच्चारण से बश में आ जाता है उसकी बुद्धि सर्वथा भ्रष्ट हो जाती है और जिसपर इस का प्रयोग किया जाता है वह मंत्रज्ञ के वशी भूत हो जाता है--एक बात मुझे और मालूम भई कि इस मंत्र के जानने वाले को बड़ी युक्ति पूर्वक चलना चाहिये--बाबू साहब भैया साहब लाला साहब जी के मुख से जो कुछ निकले उसपर स्वाद करता जाय बन पड़े तो उस में नोन मिर्च लगाता रहे और वाह भैया हां भैया का बार २ उच्चारण करता रहे--खूब खयाल रहे कि उन को किसी बात में कभी दुलखै नहीं इसलिये कि उन का रिझाना सांप का खेलौना सा कठिन है जैसा किसी ने कहा भी है--

आढ्य सेवा मनुष्याणामसिधाराववलेहनम् ।
पंचाननपरिष्वंगो ब्याली बदन चुम्बनम् ॥

धनवानों की सेवा मनुष्य के लिये वैसीही कठिन और नाज़ुक है जैसा तलवार की धार को जीभ से चाटना शेर के साथ कुश्ती करना और नागिन का मुख चूमना कठिन है--

"निद्राति स्नाति भुंक्ते चलति कचभरं शोषयत्यन्तरास्ते
दीव्यत्यक्षैर्नचायं गदितुमवसरो भूय आयाहि याहि।
इत्युद्दण्डैः प्रभूणामसकृदधिकृतैर्वारितान् द्वारि दीना
नस्मान्पश्याब्धिकन्ये सरसिरुहरुचामन्तरंगैरपांगैः॥

सोते हैं ; नहाते हैं ; अब खाते हैं ; टहल रहे हैं ; अभी गुसल से फुरसत पाय बालों को सुखा रहे हैं अभी उन से मिलने का मौका नहीं है ; अब इस जून तो पांसा खेल रहे हैं ; जाव फिर आना--इस तरह प्रभुवर भैया साहबों के उद्दण्ड डेहुड़ीदारों से भीतर जाने से बार २ रोके गये

हम ऐसे दीनों को हे क्षीरसागर सम्भवो एक बार अपने कमल नेत्र वाले सरस कटाक्षों से देख लेते होती तो हम निहाल हो जाते; क्यों इन पतितों का हमें मुह देखना पड़ता और ऐसों की आशा जोहना पड़ता—मिथ्या प्रशंसा की कथा का यह एक खण्ड सुनाया गया इसे यदि आप अनुमोदन करेंगे तो इसका दूसरा भाग भी सुनावेंगे--

अ—मो—कूल

रंगीला दृश्य

पाठक एक दिन अकेला बैठा अपने आपे से बाहर इधर उधर के खयाल के घोड़े दौड़ा रहा था और यह सोच २ हंस रहा था कि क्या उन लोगों की बुद्धि हर ली गई है जो किसी को अपने पास न रहने से अपने को अकेला मानते हैं--क्या कभी सम्भव है कि मनुष्य किसी अवस्था में अकेला रह सके? कभी नहीं--सूर्य, चन्द्रमा, तारा गण, नभ चारी, स्थल चारी, अनेक जीव जन्तु तथा अनेक दूसरे २ प्राकृतिक पदार्थ, चित्त, आत्मा, इत्यादि ऐसे संगी हैं कि इनमें से दो चार तो सदैव बने रहते हैं मनुष्य का जीते जी साथ नहीं छोड़ते--इसी ताने बाने में जी उलझा था कि एकाएक गड़गड़ाहट का शब्द कान में आया जिस के आतेही सब तार टूट गये भौचक्का हो बगलें झांकने लगा; इतने में ऊपर को नज़र गई तो एक अजीब तिलस्मात देख पड़ा--एक ओर दल के दल बादलों के गुलशोर मचाते चले आ रहे हैं दूसरी ओर सत रंगा धनुष बड़े अभिमान के साथ अपनी ऐंठ में चूर था--ध्यान तो और का और थाही ऐसा जान पड़ा मानों छोटे बड़े भूरी दाढ़ी वाले बादल रङ्ग बरङ्गी सजीली बदलियों को साथ लिये किसी प्रधान मेघराज के घर स्वयम्बर में जा रहे हैं--दो चार बड़े विकराल काले रूप वाले बादल यह समझ कि हमी धनुष तोड़ेंगे पहलेही से गर्जना की तर्जना दिखाते हुये अपने मुंह मियां मिट्टू बन रहे हैं--ये सब अपने २ नियत स्थान पर नहीं पहुंचे होंगे कि सूर्य देव नभो मण्डल वितान के नीचे निशाकर महाशय पर इन सबों के स्वागत सत्कार का भार अर्पण कर

आप अस्ताचल शयन करने चले गये—इस रङ्ग विरंगे दृश्य ने मेरे चित्त पर ऐसा जादू डाला कि मुझे अपनी सुध बुध कुछ नहीं रही अस्तु—

घर आय भोजन आदि से सुचित हो अपने कमरे में जा थोड़ी देर गप शप कर पलंग पर लेटा—खिस्तरों ने मुझे अपनी गोद में पड़े देख बड़े प्रेम के साथ अपने शीतल अङ्गों से मुझे आलिंगन करते २ तुरन्त अपनी प्रिय सखी निन्द्रा के हवाले कर दिया—अब वही हरे लाल पीले आदि रङ्ग जिनका अक्स या प्रतिच्छाया मेरे दिमाग पर अब तक पड़ा रहा था अपनी २ सूरत बदल कर चक्कर खाने लगे—

देखता हूं कि एक बहुत उत्तम स्वच्छ हरियाली से घिरा हुआ एक स्थान है वहां एक स्फटिक शिला पर बैठी एक युवती अठला २ कर अपनी अज्ञानता जताने के बहाने अपनी धानी साड़ी का आंचल खिस्काकर रसिकों का दिल निचोड़ रही है—मैं भी अपने चश्मे की अकड़ में आय खून लगाय शहीदों में जा मिला और पास आय पूंछा--आप कृपा कर अपना नाम बता सकती हैं? वह चंचला अबला अपना अंचला सम्हाल बोली आप मेरा नाम इन्हीं (अपने चाहने वालों की ओर इशारा कर) लोगों से पूंछिये--मैंने फिर कहा मैं तो आपही के श्री मुख से आप का सुधा स्यन्दी नाम सुन करणकुहर पवित्र किया चाहता हूं—तब उसने बड़े नाज़ो नखरे के साथ कहा यों तो मेरे अनेक नाम हैं किन्तु मेरा प्यार का नाम विजया है और लोग मुझे सदाशिव की अर्द्धांगिनी पार्वती की प्रिय सखी भी कहते हैं—

यह सुन मुझे कुछ अचरज सा हुआ और अब मैंने इसके चाहने वालों की ओर दृष्टि फेर देखा तो मुझे उसमें सब हिन्दूही हिन्दू देख पड़े उन में भी ब्राह्मण तो तन मन से इसपर अपने को न्यौछावर किये थे—कोई बगल में पोथी दबाये मुहबाये बिलार सा ध्यान लगाये इसकी ओर देख रहे हैं—कोई स्वच्छ मांजा हुआ जनेऊ धारण किये माथे में भस्म का त्रिपुण्ड पोते बड़ी २ चुटिया रखाये आंख फैलाये ताक रहे हैं—एक ओर संडे मुसंडे पंडे गले में गंडे बांधे कूड़ी सोंटा हाथ

में लिये अलगही ढाई चावल पका रहे हैं और यह भी मुझे मालूम हुआ कि ये सब उसके पाने को ऐसा ललचा रहे थे कि मानो यदि वश चले तो उसी दम उठाकर घोल के पी जाँय--ये लोग यह देख कि मैंने उस धानी साड़ी वाली अलबेली को न तो प्रणाम किया न उनके समान मेरे मुह में पानी भर आया मुझ पर कुछ क्रुद्ध सा हुये और मेरी ओर आ खड़े हुये-उस में से एक जो रूमाली कसे हुये था ऊपर से जोगिया रङ्ग का एक अंगोछा लपेटे ऐंठते हुये पास पहुंचा और कहने लगा-ओ अन्धे आंख पर की ठिकड़ी हटा कर इधर ताक तू नहीं जानता यह सदाशिव की विभूति है "इसका नाम कमलावती रहै नैन भरपूर-साधो खाई सन्तो खाई खाई कुंवर कन्हाई-जो विजया की निन्दा करै उसे खाय कालिका माई-बंअगड़ बं दे तीन छिट्टे मूंजी के नाम-" इस प्रकार की इनकी भोड़ी कविता और महा असभ्य आचरण देख मुझे गुस्सा तो बड़ा आया पर "कमज़ोर को गुस्सा मार खाने की निशानी" मन में सोचा कुछ भी बोलता हूं तो ये सब के सब मेरे ऊपर टूट पड़ैंगे और ये संडे मुसंडे डंडे से पलेथन निकाल डालैंगे-यही सब सोंच तुरन्त दुम दबाय खींसे काढ़ दीं और कहा "वाह महाराज क्याही उत्तम कविता है हम लोग बन्दर के समान क्या जानें आदी का स्वाद हम को उसके जानने की आवश्यकता भी नहीं पड़ी आप ठंढे रहैं हम तो आप लोगों के चेले हैं"—इतना कह मैंने विजया देवी को दूर ही से प्रणाम किया और जानाही चाहता था कि एक ओर से कह-कहे के शब्द ने मुझे चौंका दिया-

जिधर कहकहे का शब्द सुन पड़ा था उसी ओर मैंने मुख मोड़ा भागने को तो थाही कि चित्त ने मेरी अगाड़ी पिछाड़ी खोल दी और २० मील फी घंटे की चाल के अनुसार उसी ओर को छूटा जिधर से शब्द आया था और डेढ या दो मिनट में वहां पहुंच अपना दम ठिकाने करने लगा-जब जामे में आया तो एक नये किस्म का तमाशा देख पड़ा—बहुत से मनुष्यों के कई झुण्ड नज़र पड़े इनमें पहिला झुण्ड फेशन परस्त कोट पैंट वाले जेंटिलमेन अफ दि ट्वेंटियथ सेंचुरी

Gentle men of the 20th century का था ये सब एक नाज़नीन सुर्ख़ पोशाक वालीजो साफ और सुथरे फर्श पर शीशे जड़े हुये कमरे में उछल कूद रही थी के चाहने वाले थे जो मन में आता था भकुआ बने आय बांय शांय बक रहे थे-मैंने कई बार ध्यान दे कान फटफटाय कर सुनना चाहा कि ये क्या बक रहे हैं और किस विषय पर अपनी बुद्धि को गोठिल किये डालते हैं पर सिवाय Ah! Ah! once more her health...... Oh..... a......you........ Bara कां जाटा टुम इडरआ......ना......मागे...... के और कुछ न सुन पड़ा-इनमें से बहुत से महाशयों को तो मैं खूब जानता हूं—अरे रे रे यह तो बड़े प्रसिद्ध रईस......ओह I am यह यहां क्या कर रहे हैं; इस तरह के टूटे फूटे शब्द सहसा मेरे मुख से निकल पड़े-मैं पास तो था ही एक महाशय मेरी ओर बढ़ते हुये देखाई पड़े परन्तु वे पैर रखते कहीं थे और पड़ता कहीं था तीन चार कदम चलने के बाद ऐसी ठोकर ली कि धड़ाम से गिर पड़े और बड़ बड़ाने लगे 'Oh gen-men what.........name.......ple„ यह बक गड़ गाय हो गये-एक महाशय को अभी गाड़ी से उतर उधर आते देख मैं उनके पास गया और दीनता से पूछा क्यों सरकार अगर आपका कोई हर्ज़ न होता हो तो मुझे इस मतवाली लाल परी का नाम बतला दीजिये-"अहहह (हंस कर) आप इनका नाम मुबारक मुझ से दरियाफ़ करते हैं आइये मैं आप को इन से Introduce कर दूं—मगर तबियत अपनी काबू में कर लीज़िये अहहह (हंस कर) कहीं ऐसा न हो कि आप भी अंगुली पकड़ते पहुंचा थाम लें" तब तो मैं सिट पिटाया और कहा मैं अङ्गरेज़ी तरीके से न मिलूंगा क्योंकि मैं न तो बूट पहिने हूं और न फेल्ट क्याप-भला दो पल्ली टोपी धोती और सलीम साही से तो काम चलेहीगा नहीं सो आप हिन्दुस्तानी तरीके पर मुझे उन से मिलाइये और केवल नाम मात्र का परिचय दिला दीजिये-वह इस बात पर राज़ी हो गये और मुझे उसके सन्मुख लाकर खड़ा कर दिया-मैंने तीन बार झुक कर तसलीमात अर्ज़ की और हांथ पर हांथ धर चुप चाप खड़ा हो गया-तब हमारे उक्त महाशय ने मेरा नाम बतलाया और उन का नाम मुझे बतलाया कि आपका "इस्म शरीफ़ अहहह (हंस कर) अरे

भाई कौन सा बतलाऊँ इनकी कई एक हमशीरा हैं उन सबों में हालां कि रङ्ग में फर्क है लेकिन नाम एकही है—हां नाम बतलाना तो भूलही गया अरे इनके नाम का पहिला हर्फ शीन है—मेरी समझ में सींग आया मैंने कहा क्यों साहब इनके तो सींग मुझे नज़र नहीं आती—यह सुन वे बहुत बिगड़े और बोले तुम तो बिलकुल काठ के उल्लू हो ऐसे बद तमीज़ बेतहज़ीब को नाम न बतलाया जायगा—मैं चुप हो गया इसपर वह लाल परीने मैं (यही नाम उसका रक्खे देता हूं) ऐसे चुल-बुलाहट के साथ मुसकिरा कर प्यार भरी निगाह से देखा कि मैं पत्थर हो गया इस "समय मेरी दशा बहुतही डमा डोल हो रही थी कि आकस्मात् "न्यायात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः" जो मुझे याद न आया होता तो बेतहाशा मैं भी उस युवती से लिपट कर एकबार उसका चुम्बन अवश्यही कर लेता—धन्य है सच्चिदा नन्द तूही ऐसी २ कठिन विषम अवस्था में बचाने वाला है नहीं तो मैं भी उस दुष्टा के बनावटी धोखे में आय अपनी शुद्ध परिपाटी; बाप दादों के नाम; उच्च कुल के जन्म पाने की प्रतिष्ठा; आदि सब बहुमूल्य रत्नों को एक सेकेण्ड में छार में मिलाय मुह में करखा पोत जीतेही नरक में ढकेला जाता—इतने में मेरे बाईं ओर लग भग २० गज़ के फासिले पर लोगों ने बड़ा कोलाहल मचाना आरम्भ किया इस कारण मेरा ध्यान बट गया—देखता हूं तो अमुक अमुक बड़ी लम्बी उपाधि धारी शर्मा; अमुक लाला साहब या बाबू साहब; अमुक प्रसाद; इत्यादि आपस में इस बात पर लड़ रहे हैं कि रुपये की कै चवनिया होनी चाहिये कोई कहता है सात कोई कहता है नहीं पांच और यह कह बार २ हाथ जोड़ते हैं फिर गाली घूंसे और जूते इन सबों का यथा योग्य व्योहार कर पीछे बेहोश हो पृथ्वी पर ऐसे हिसाब से गिरे कि मियां युक्लिद होते तो वे भी न बतला सकते कि युक्लिदिस की बारहो किताब में कौन से प्रापोज़िसन की शकल इन लोगों ने बनाया है—एक हज़रत पड़े हुये बर्रा रहे हैं—"शराब थोड़ी सी होती तो हम वज़ू करते—खुदा के सामने पैदा कुछ आबरू करते"—यह सब तमाशा देख

मुझे पुराने लोगों की युग व्यवस्था का ध्यान आया और सोचने लगा हमारे धर्म ग्रन्थों में जो कुछ कलि युग के सम्बन्ध में लिखा गया है सब सत्य है बहुतही सटीक उतरते हुये पाया जाता है--उनकी भविष्य वाणी हर्फ़ बहर्फ़ सच्च मालूम होती है--हाय संसारार्णवलंघनक्षम बुद्धि और विवेक सम्पन्ना मनुष्य जाति की यह दुर्गति अब नही देखी जाती इन से तो पशुओं को मैं बहुत अधिक श्रेष्ठ मानता हूं—क्या सत्य ऐसों को भी हम मनुष्य कहैं ? भाई हम से तो ऐसी भूल कदापि न होगी बरन हम तो ऐसों को जोंक और खटमल के किस्म के कहते तो बहुत सन्तुष्ट होते–

"अरेँ ओँ गँडेरी वाले इँधर इँधर——

हैं यह क्या किसी भूत की अवाज़ है–अरे रे यह क्या–मेरे हांथ पांव क्यों ठंढे होते जाते हैं मैं तो अपने को बड़ा निडर माने हुये था आज क्या हो गया फिर भी तबियत में ढाढ़स बांध जी मज़बूत कर मैंने अपने आंख की पुतली दाहिनी ओर घुमाई जब कोई भयानक वस्तु को न देखा तो बड़ी फुर्ती के साथ उसी ओर को झुक पड़ा– "ओ हो आदाब अर्ज़ मीर साहब हैं फरमाइये आप यहां आज किसकी खोज में आ पहुंचे–मेरे इतने पूछने पर मीर साहब बोले—"अँरे यँार इँस कँाली वेँगम ने तोँ नाक में दम कँर दियँा–मरे न माँचाँ छोँड़े औँर हमारेँ ऐसेँ बेँहयाँओँ को मौत भीँ तँलँब नहीं करती"— उन की ये बातें सुन मैं अचम्भे में आ गया–(मन में कहने लगा) यह काली बेगम कौन है और उस्से इस बुढ़ऊ की कैसे भेंट हो गई–क्या वास्तव में कोई स्त्री है--जब इन प्रश्नों का उत्तर मेरी मन्द बुद्धि में न आया तो मैंने मीर साहब से पूछा–क्यों हज़रत यह काली बेगम का मुअम्मा मेरी समझ में नहीं आया–"मीर साहब बोले"–अँरे खाँ साहब ज़रा इन्हें बतलाँ तों देते यह क्या पूछते हैं" खाँ साहब– वल्लाह तुम भी क्या मज़े के आदमी हो काली बेगम की शकल से नहीं तो क्या उस्के नाम से भी आशना नही हो-मैंने कहा भाई तुम लोगों के नाम भी तो पेचीदा होते हैं–कैसे समझ में आवे–तब मुझे उन्होंने

एक रकाबी की ओर देखने को कहा देखो इस चांदी की कुरसी पर आपही तशरीफ रखती हैं—"वाह जी अन्धा बनाते हो यह तो अफीमहै"—तोबा २ अरे यह नाम तो दुश्मनों ने इन का रक्खा है—भाई इस नाम की याद मत दिलाओ—इतने में मुझे जंभुआई आई तो जितने मेरी ओर देख रहे थे सब मेरी ओर दौड़ मेरा मुह बन्द करने लगे सांस के रुकने से मेरा दम घुटने लगा इसी घबराहट में मेरी नींद खुल गई—सब झगड़ा समाप्त हुआ पर इस का असर जो मेरे दिल में नक़्श सा हो गया अब तक बना है—

व्र—मो—कूल

हम लोगो की तालीम में ताली का लगनजाना

अनेक आधि व्याधि पूरित हो हर तरह का दुःख और क्लेश उठा ते हुये भी ढाढ़स बांधे थे कि कोई हर्ज़ नहीं ब्रिटिश गवर्नमेंट का उदार शाशन हमें बड़ा भारी बहुमूल्य रत्न दे रहा है कुछ दिनों में हमारी जो कुछ हानि हर तरह की अब तक हुई और होती जाती है सब घाटा मिट जायगा और हम भी सभ्यतम जातियों के बीच दाखिल हो किसी अन्श में किसी से कम न रहेंगे—पर इस युनीवरसिटी कमिशन ने हमारी उस आशा को सपने का सा खयाल बना दिया—यह कमिशन का बैठना भी हिकमत अमली का बड़ा भारी सहारा है—"हुईहैं वही जो राम रच राखा"—होता है वही जो कर्मचारी पहले से गांठ रखते हैं कमिशन का एक बड़ा जगडवाल आडम्बर रच तब अपना मानसिक भाव प्रगट करते हैं-- और कमिशनो में तो जो बातें मंज़ूर रहती हैं गोलमगोल तौर पर ज़ाहिर की जाती हैं इस्में तो साफ २ कह दिया गया कि सर्व साधारण का पूर्ण विद्वान् होना पसन्द नहींहै थोड़ेही लोग पढ़ें किन्तु जो पढ़ें वे ऐसे न हों कि नाम तो विद्वान् होने का रहै पर सर्वथा अध कचड़े से रहैं--जैसा बाज़ फूल कलीही से ठिठुरता हुआ फूलते२ अर्द्धविकसित सा हो रह जाता है--यदि

शुद्ध यही भाव है तो कमिशन को हम धन्यवाद देते हैं किन्तु प्रजागण में सर्व साधारण को इसका गूढ़ अभिप्राय मन में न आय बहुत तरह के दूसरे २ अर्थ इस्के लोग लगा रहे हैं-कोई कहते हैं सब लोग पढ़ २ हाकिमों से बराबरी का दावा करने लगे हैं--कोई कहते हैं कानग्रेस न हुई होती तो यह बला न आती--कोई कहते हैं सरकार कहां से इतनी नौकरी लावे जो जितने पढ़ते जांय सबों को नौकर रखती जाय इत्यादि इत्यादि--अस्तु यहीं तक रहता कि गवर्नमेंट के स्थापित कालेजों में जो पढ़ेंगे उन्हें अधिक फीस देना होगा तहां तक हम लोगों को कोई घबड़ाहट न थी-सुनते हैं अब तो यह होने वाला मालूम होता है कि प्रइवेट कालेज भी जिस से गवर्नमेंट का कोई सम्बन्ध नहीं है उनमें भी फीस केवल दोतिहाई गवर्नमेंट कालेजों से कम रहेगी नहीं तो वे स्वीकार न किये जांयगे-आशा करते हैं लार्ड कुरज़न महोदय विचारशक्ति को काम में लाय इसका कभी अनुमोदन न करैंगे-यदि यह सच है तो अब आगे से केवल वेही उत्तम शिक्षा के अधिकारी रहेंगे जो खूब अच्छी तरह रंजे पुजे और मालदार हैं--स्मरण रहे यह बिलायत नहीं है जहां मालदार भी अधिकांश हैं और जो रुपये वाले हैं वेही पढ़ते भी अधिक हैं--यह हिन्दुस्तान है यहां के धनी जन विद्या के रसिक नहीं होते उन्हे अपने ऐश आराम से फुरसत कहां जो पढ़ने लिखने के लिये व्यर्थ को सिर दुखावैं--यह जो कुछ हुआ है सब मध्यम श्रेणी वालों पर बिसायगी जो अपना तन बेचैंगे पर बालकों को उत्तम शिक्षा देंगे सही--जो हो रिपन या नार्थब्रूक से शाशन कर्ता तो काहे को कभी आने वाले हैं लार्ड लिटन महोदय की कार्य प्रणाली को हम अब तक नहीं भूले थे--वर्तमान् शासन कर्ता के शासन की कार्य प्रणाली ने लिटन महोदय को भूलवा दिया-इस लिये कि लिटन महोदय से कोई ऐसी बात न बन पड़ी थी जिससे देश का कोई वास्तविक अपकार हुआ हो--हम लोगों की शिक्षा पर यह बड़ा भारी धक्का का लगना ऐसी बड़ी हानि है जो किसी भांत नहीं पुर सकी--अराजक न समझें जांय इस लिये राजकीय विषयों की समालोचना हमने बहुत

दिनों से बिलकुल छोड़ दिया पर यह विषय तालीम का इतना गुरु तर है कि इसपर न कुछ कहना अपने कर्तव्य में बड़ी भारी त्रुटि का लाना है इससे लाचारी कुछ कहनाही पड़ा--अन्त में श्रीमान् वाइसराय महोदय से सविनय निवेदन है कि वे पूर्वापर को भली भांत विचार इस बारे में ऐसाही कुछ करैंगे जिसमें हम लोगों की शिक्षा में हानि न पहुंचे और आबाल वृद्ध प्रजागण के धन्यवाद के भाजन हों—

गीतासार समुच्चय पहिले के आगे से

पाचवें अध्याय में फिर अर्जुन पूछते हैं एक बार तो आप कहते हो कर्मों को त्याग सन्यास धारण करो फिर कर्मयोग की भी सराहना कर रहे हो इन दोनों में जो मार्ग श्रेष्ट हो सो बतलाइये--इस पर भगवान् कहते हैं कर्म के त्याग से कर्म में लगे रहना उत्तम है—

ठीक मालूम होता है वह सिपाही जो रण से विमुख हो भाग गया उसकी कौन तारीफ है बरन प्रशंसा उसी योधा की है जो बराबर घाव पर घाव खा रहा है और संग्राम भूमि से मुह नहीं मोड़ता—ये गेरुआ रंगाने वाले केवल भेख के विरक्त हैं मन के विरागी तो कदाचित् हज़ारों में कोई एक हों या न हों--किस काम की यह विरक्ति--मन में तो यावत् वासना लगी है किसी एक विषय से भी बैराग्य नहीं हुआ न षट् रिपु में एक को भी इसने दबाया या जीता केवल लोक में प्रतिष्ठा पाने को या किसी दूसरी बात पर लक्ष्य बांध सन्यासी हो गये--गिरे भारत को और नीचे गिराने को जहां और बहुत सी बातें हैं उनमें इन सन्यासी उदासियों का वृन्द भी है--पहले तो एक मोटी सी बात यही खयाल करने के लायक है कि जिस देश में इतने लोग बिना कुछ हांथ पांव की मेहनत किये दुसरों के परिश्रम का फल खाने वाले होंगे उस देश के कल्याण की कौन आशा की जा सक्ती है--पहिले समय की जो ४ आश्रम की प्रथा पी उसका यह प्रयोजन था कि ब्रह्मचर्य और गृहस्थ आश्रम में रह अपना

या अपने आश्रितों का भला करता रहै वानप्रस्थ और सन्यासाश्रम में पहुंच जो कर्तव्यता उसकी केवल अपने या अपने आश्रितों के लिये थी वह अपना संकुचित भाव छोड़ जगत् भर के लिये हो गई—सन्यासियों में इस समय दोही तरह के पाये जाते हैं या तो भेष बनाय प्रजा को ठगने वाले या आधुनिक क्रम के निरे अकर्मण्य ब्रह्मास्मि कहने वाले—स्वामी दया नन्द से लोकोपकार की दृष्टि रख गिरे भारत को फिर से उठने के लिये जोश दिलाने वाले तो विरले बरन हई नहीं—अब दूसरी ओर लीजिये कर्म योग मे लगा हुआ गृहस्थ यदि आध्यात्मिक उन्नति पर लक्ष्य बांधे हुये षट् रिपु से लड़ता हुआ युद्ध में डटा रहे तो सन्यास की आपेक्षा उसमें कौन सा हेठापन है—और भी कर्म योग में प्रवृत्त चित्त की शुद्धि द्वारा आध्यात्मिक ज्ञान का अपने को पूरा अधिकारी कर रहा है—तीसरे यह कि विघ्न बाहुल्य दूषित ६ दिन के मार्ग से ६ महीने की रास्ता पर चलना क्या बुरा है—सन्यास तो इतना कठिन है कि इसमें एक २ पग में स्खलन है—इसी से पराशर ने "सन्यासंपलपैतृकम्" कह सन्यास को कलि वर्ज्य धर्म में शामिल कर दिया—गृहस्थों के लिये कहीं पर स्खलन की भय नहीं है यदि बराबर सीधी राह पर चलता जाय—इन्हीं सब बातों का खयाल कर भगवान् ने कर्म योग को श्रेष्ठ कहा—इसी से आगे कहते भी हैं—

ज्ञेयः स नित्यसन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते॥

हे अर्जुन तुम उसे नित्य सन्यासी समझो जिसको न किसी से किसी बात की चाहना है रागद्वेष शीतोष्णादि द्वन्द्व से अलग है ऐसा शुद्ध चित्त पुरुष बन्धन से सुख पूर्वक छुट जाता है—आगे और भी कहते हैं—

सन्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः।
योग युक्तो मुनिर्ब्रह्म न चिरणाधिगच्छति॥

कर्म योग के बिना सन्यास अति कठिन है कर्मयोग में लगा मुनियों की सी वृत्ति धारण किये शीघ्र ब्रह्म को पा जाता है—और भी जीव मात्र में जिसको सहानुभूति है अर्थात् प्राणीमात्र को अपने समान मानता है इन्द्रियों को वश में किये हुये भलाई का काम करते २ जिसका चित्त शुद्ध हो गया है वह मनुष्य लोक संग्रह के लिये शरीर के काम खान पान चलना फिरना सोना जागना देखना सुनना आदि करता हुआ भी उस कर्म के बन्धन से छुटा रहता है—यहां तक तो सब ठीक है—आगे कहते हैं—"नैवकिंचित्करोमीतियुक्तोमन्येततत्ववित्—पश्यन् शृण्वन् स्पृशन्"—इत्यादि—तत्व को पहुंचा हुआ ऐसा समझे कि मैं सब काम करता कुछ नहीं करता—देखता सुनता छूता इत्यादि करता हुआ भी मैंने कुछ नहीं देखा सुना छुआ इत्यादि—यह निरी अत्युक्ति है यह कभी हो नहीं सक्ता असंभव सा बोध होता है—इससे बुराई या बिगड़ जाने की अधिक संभावना है—जो हो इस समय अब ऐसा मनुष्य देखने या सुनने में नहीं आया अतः यह "फिलासोफी" कच्ची है--मालूम होता है कोई स्वभाववादी ब्रह्मास्मि कहने वालों ने इन श्लोकों को गढ़ यहां मिला दिया है-भगवान् कृष्णचन्द्र का ऐसा उपदेश हम कैसे मान लें-क्योंकि आगे बढ़ कर ऐसा मानने वाला "स्वभावस्तु प्रवर्तते" कह खुल पड़ा है-वहीं का यह श्लोक भी है-

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन पद्म पत्रमिवाम्भसा॥

कर्म को ब्रह्म में अर्पण कर संग को त्याग जो कर्म करता है उसे पाप नहीं लगता जैसा कमल का पत्ता जल में रह कर भी जल उसके ऊपर नहीं ठहरता—तात्पर्य यह कि ब्रह्म ज्ञानी हो जाय फिर कितनाही पाप करता जाय पाप का स्पर्श उसे न होगा—इस तरह के और कई श्लोक हैं—स्वभाव वादियों की नष्ट फिलासोफी यह है सब कुछ स्वभाव से होता जाता है नवद्वार वाले पुर अर्थात् देह में यह जीव रह कर न आप कुछ करता है न दूसरे से कुछ कराया जाता है—मन से सब कामों